छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
हिन्दी मासिक मुख पत्र
माह - मार्गशीर्ष-पौष, संवत् 2076
दिसम्बर 2019

ओ३म्

अंक 170, मूल्य 10

अग्निदूत

अग्निं दूतं वृणीमहे. (ऋग्वेद)

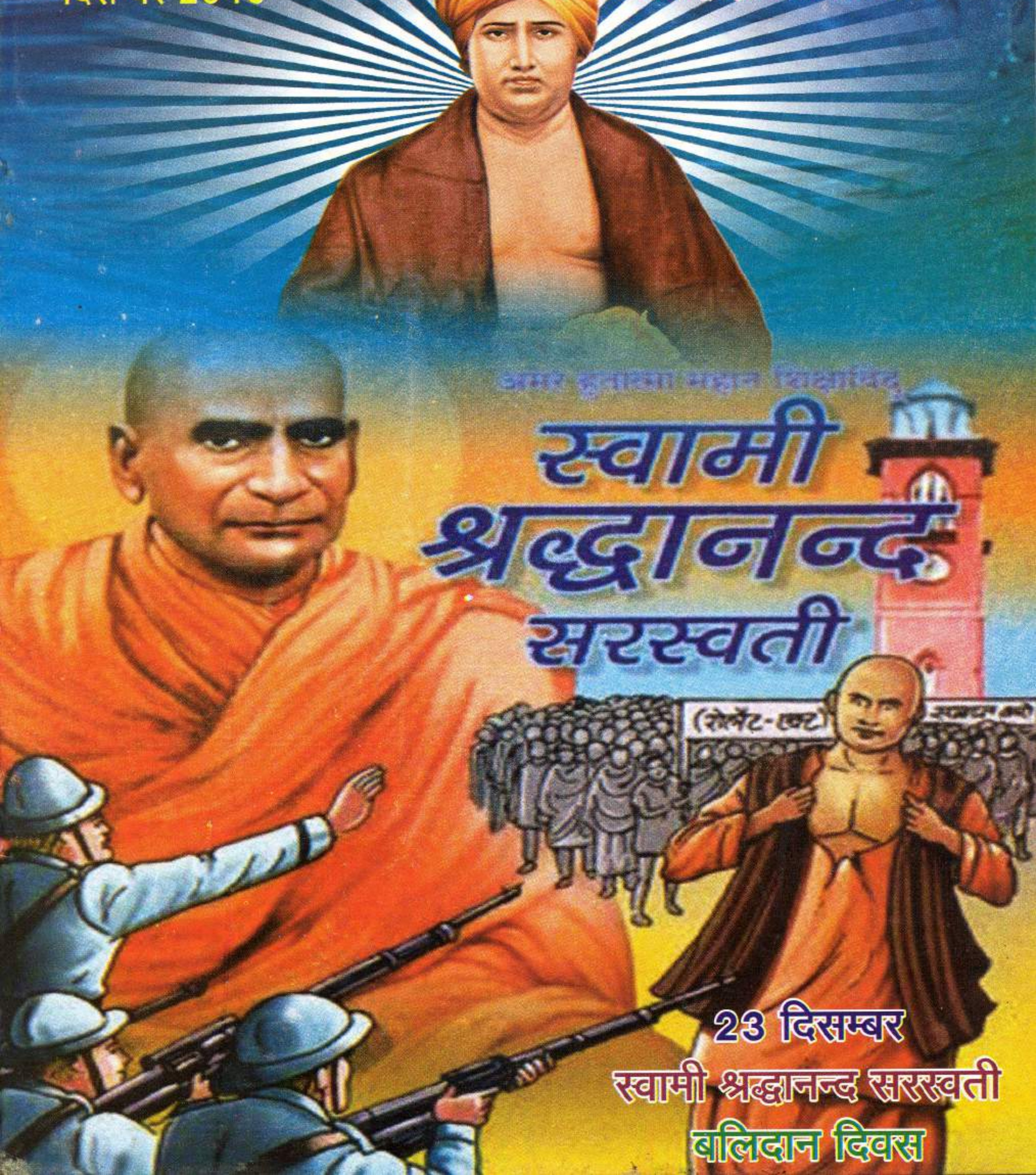

दिनांक 24 से 28 नवम्बर 2019 तक भगतसिंह स्मारक भवन, टाटीबन्ध रायपुर में छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा एवं हिन्दुस्तान स्काऊट एण्ड गाइड्स के संयुक्त तत्वावधान में सम्पन्न आर्यवीर दल शिविर की झलकियाँ

अग्निदूत

हिन्दी मासिक

राष्ट्रीय, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनीतिक विचारों की मासिक पत्रिका

विक्रमी संवत् - २०७६
सृष्टि संवत् - १,९६,०८,५३,११९
दयानन्दाब्द - १९६

: प्रधान सम्पादक :
आचार्य अंशुदेव आर्य
प्रधान सभा
(मो. ०७०४९२४४२२४)

★

: प्रबंध सम्पादक :
आर्य दीनानाथ वर्मा
मंत्री सभा
(मो. ९८२६३६३५७८)

★

: सहप्रबंध सम्पादक :
श्री चतुर्भुज कुमार आर्य
कोषाध्यक्ष सभा
(मो. 8370047335)

★

: सम्पादक :
आचार्य कर्मवीर
मो. ८१०३१६८४२४

पेज सज्जक :
श्रीनारायण कौशिक

- कार्यालय पता -
छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा
दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग (छ.ग.)४९१ ००१
फोन : (०७८८) ४०३०९७२
फैक्स नं. : ०७८८-४०११३४२ ;
e-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com

वार्षिक शुल्क-१००/- दसवर्षीय-८००/-

वर्ष - १५, अंक ५ ओ३म् मास/सन् - दिसम्बर २०१९

श्रुतिप्रणीत-सिद्धधर्मवह्निरूपतत्त्वकं,
महर्षिचित्त-दीप्त वेद-सारभूतनिश्चयं ।
तदग्निसंज्ञकस्य दौत्यमेत्य सञ्जसञ्जकम् ,
सभाग्निदूत-पत्रिकेयमादधातु मानसे ।।

विषय - सूची

			पृष्ठ क्र.
१.	ऐश्वर्य का रथी	स्व. रामनाथ वेदालंकार	०४
२.	विलक्षण व्यक्तित्व के स्वामी-श्रद्धानन्द	आचार्य कर्मवीर	०५
३.	वेद एवं सांसारिक अध्यात्म	डॉ. सत्यपाल सिंह	०८
४.	आर्ष योग की सातवीं सीढ़ी-ध्यान	आचार्य आर्यनरेश	११
५.	ईश्वर, वेद और ऋषि दयानन्द के सच्चे अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द	मनमोहन कुमार आर्य	१३
६.	मुमुक्षु व्यक्ति का जीवन ....?	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती	१६
७.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आर्यसमाज की प्रासंगिकता	ओमप्रकाश आर्य	१८
८.	प्रणम्य-धर्मनिष्ठा	सी. ए. राजकुमार	२१
९.	व्यक्ति धर्म, राष्ट्र धर्म एवं अध्यात्म का उत्तम ग्रन्थ "गीता"	प्रो. उमाकान्त उपाध्याय	२४
१०.	भारत स्वतन्त्र कराने में आर्यसमाज का योगदान	आशीष यादव	२७
११.	गीता में भक्तियोग	महात्मा चैतन्यमुनि	२९
१२.	होमियोपैथी से सर्दी नजला का उपचार	डॉ. विद्याकांत त्रिवेदी	३२
१३.	समाचार प्रवाह		३३

सूचना : छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का अणुसंकेत
(ई-मेल) E-mail : chhattisgarhsabha@gmail.com
(सम्पादक) E-mail : shastrikv1975@gmail.com

सूचना : हमारा नया वेब साइट देखें
Website : http:/www.cgaryapratinidhisabha.com

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक - आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया।

वेद
वेदामृत

ऐश्वर्य का रथी

भाष्यकार - स्व. डॉ० रामनाथ वेदालङ्कार

त्वं नश्चित्र ऊत्या, वसो राधांसि चोदय।
अस्य रायस् त्वमग्ने रथीरसि, विदा गाधं तुचे तु नः ॥

ऋषिः शंयु, बार्हस्पत्यः (तृणपाणिः) । देवता अग्निः । छन्दः ककुस्मती भुरिक् अनुष्टप् ।

● **(वसी)** हे धन-स्वरुप परमेश्वर ! **(चित्रः)** अद्भुत गुण, कर्म, स्वभाववाला **(त्वं)** तू **(नः)** हमारे लिए **(ऊत्या)** (अपनी) रक्षा से **(राधांसि)** ऐश्वर्यों को **(चोदय)** प्रेरित कर। **(अस्य)** इस **(रायः)** ऐश्वर्य का **(त्वं)** तू **(अग्ने)** हे अग्नि-स्वरुप परमात्मन् ! **(रथीः)** रथ-चालक, नेता **(असि)** है, **(नः)** हमारी **(तुचे)** सन्तान के लिए (तु) शीघ्र **(गाधं)** प्रतिष्ठा को **(विदाः)** प्राप्त करा।

हे जगदीश्वर ! तुम वसु हो, हम निर्धनों के धन हो, दीन-हीन अवस्था से हमारा उद्धार करने वाले हो। तुम चित्र हो, अद्भुत गुण-कर्म-स्वभाववाले हो। तुम जैसा गुणी, तुम जैसा सुकर्मा, तुम जैसा धीर-वीर-शान्त स्वभाववाला जगतीतल में अन्य कोई नहीं है। जो एक बार तुम्हारी झांकी पा लेता है, वह तुमपर मुग्ध हो जाता है। उसके मुख से सहसा तुम्हारे लिए ये शब्द निकल पड़ते हैं - अद्भुत ! आश्चर्यजनक ! विस्मयकारी ! हे भगवन् ! तुम ऐश्वर्य के रथी हो, चालक हो, ऐश्वर्य-रथ को लिये फिरते हो, और जिन्हें ऐश्वर्य की आवश्यकता है, चाह है, उन्हें ऐश्वर्य बांटते जाते हो। तुम जिसे अपनी रक्षा में ले लेते हो उसकी सब चिन्ता तुम स्वयमेव करते हो, उसे अपनी चिन्ता करने का कष्ट नहीं उठाना पड़ता है। हे प्रभुवर ! हमें भी तुम अपनी रक्षा में ले लो, और हमारे प्रति ऐश्वर्यों को प्रेरित करते चलो। किस अवस्था में कौन से ऐश्वर्य हमारे लिए कल्याण कर होंगे, यह भी तुम स्वयं ही देखो, क्योंकि जब हमारी रक्षा की डोर तुमने पकड़ ली, तो क्या हमारे लिए हितकर है और क्या अहितकर इसके निर्णायक हम नहीं होना चाहते। हम तो इतना ही जानते हैं कि सोना-चांदी, धन-दौलत को भी ऐश्वर्य कहते हैं, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को भी ऐश्वर्य कहते हैं, सद्गुणों को भी ऐश्वर्य कहते हैं, सुख-शान्ति को भी ऐश्वर्य कहा जाता है और मानव जाति की आध्यात्मिक निधि भी ऐश्वर्य कहाती है। इनमें से जिस ऐश्वर्य का भी हमारे पास अभाव है और अपने समुचित विकास के लिए हमें उसकी आवश्यकता है, वह ऐश्वर्य तुम हमें प्रदान कर दो।

हे दीनबन्धु ! हमारी तुमसे यह प्रार्थना भी है कि तुम हमारी सन्तान को प्रतिष्ठा प्राप्त कराओ। ऐश्वर्य, प्रतिष्ठा आदि वंशानुक्रम से विरासत में प्राप्त होकर आगे-आगे चलते रहने चाहिए। अन्यथा यदि हम तो ऐश्वर्यवान् और प्रतिष्ठित हो गये, किन्तु हमारी सन्तानें ऐश्वर्य-हीन तथा प्रतिष्ठा-हीन रही, तब तो हमारे बाद ऐश्वर्य और प्रतिष्ठा का अन्त हो जायेगा। हम तो चाहते हैं कि यह परम्परा अविच्छिन्न रुप से चलती रहे, तभी जगत् के वर्तमान और भविष्य दोनों को ऐश्वर्यवान् एवं प्रतिष्ठावान् बनाने का हमारा लक्ष्य पूर्ण हो सकता है। हे प्रभु ! इस लक्ष्य-पूर्ति में हम तुम्हारे सहायक बनो।

संस्कृतार्थ :- १. राघस् धन (निघं.२.१०)। २. तुच् सन्तान (निघं. २.२)। ३. गाधं प्रतिष्ठां तु शिप्रं विदाः लभ्भय (सायण)।

सम्पादकीय

विलक्षण व्यक्तित्व के स्वामी – श्रद्धानन्द

23 दिसंबर को जिनका बलिदान दिवस है:– भारतीय स्वतंत्रता में अग्रणी भूमिका निभाने वाली संस्था आर्यसमाज के अग्रगण्य महापुरूषों में जिनका पुण्य स्मरण किया जाता हो, महान देशभक्तों की प्रथम पंक्ति में जिनका नाम श्रद्धा से लिया जाता हो, जो अखिल भारतीय कांग्रेस के संकट मोचक माने गये हों, मोहनदास करमचन्द गाँधी को महात्मा बनाने वाले तथा शुद्धि आन्दोलन के प्रखर प्रणेता होने के बावजूद भी जिन्हें साम्प्रदायिक सौहार्द्र में अग्रणी मानकर दिल्ली के जामा मस्जिद की मिम्बर से मुसलमानों को देशभक्ति के लिए प्रेरित करने को आमंत्रित किया गया हो, अंग्रेज सरकार से बहादुरी पूर्वक टक्कर लेने वाली छबि और सिद्धान्तों की तारीफ के पुल बाँधता हो, 1868 ई. में जिस महान् व्यक्तित्व ने अल्प समय में ही उस समय की विशाल धनराशि 30,000 रूपये दान स्वरूप संग्रह के साथ–साथ लगभग 1800 बीघे का पूरा गांव राष्ट्र महायज्ञ के लिए आहूत करके जिसने ऋषि ऋण चुकाने की पावन परंपरा का निर्वाह किया हो, ऐसे अमर हुतात्मा के जीवन से प्रेरणा लेकर आइए हम भी अपना जीवन धन्य करें।

1. आदर्श शिक्षा के उन्नायक:–

स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का शिक्षा के क्षेत्र में अत्यंत प्रकृष्ट चिंतन था इसलिए उन्होने छात्रों को विद्वान् मनीषी तथा ब्रह्मचारी बनाने के लिए बीसवीं संदी के आरंभ में अपने गुरूवर ऋषि दयानन्द के आदर्शों के अनुरूप गुरूकुल शिक्षा प्रणाली का इस आधुनिक युग मे सर्वप्रथम सूत्रपात किया। गुरूकुल तो स्वामी जी के बाद भी खुले तथा आज भी चल रहें हैं। तथापि उनका क्षेत्र बहुआयामी न होकर केवल कुछ क्षेत्रों तक ही सीमित है। आज अधिकांश गुरूकुलों की यही स्थिति है। यद्यपि आज गुरूकुल कांगड़ी में पर्याप्त परिवर्तन आ गया है उस समय की विद्वत्ता तथा कर्मठता नहीं रह गई है किन्तु शिक्षा के क्षेत्र में

उसके योगदानों को वर्तमान काल में भी नहीं नकारा जासकता।

2. स्वच्छ राजनीति केपोषक :-

इन कार्यों के साथ-साथ स्वामी जी तात्कालिक राजनीतिमें भी प्रमुख भूमिका निभाते रहे। स्वामी जी राजनीति में किसी पद के लिए नहीं गये थे, अपितु इसके माध्यम से समाज सुधार के लिए गए थे। आज सर्वत्र व्याप्त भ्रष्टाचार की राजनीति किससे छिपी है। वे राजनीति में भी नैतिकता तथा धार्मिकता चाहते थे। इसलिए उन्होने लिखा था कि आज ऐसे धार्मिक दल की आवश्यकता है, जो दुसरों को धोखा देना भी वैसा ही पाप मानतां हो जैसा कि अपने आपको धोखा देना। आर्य समाज ने राष्ट्रीय क्षेत्र में राजनीति को छोड़ दिया यह न तो आर्यसमाज के लिए शुभ रहा तथा न ही देश के लिए। राजनीति से दूर रहकर आप स्वामी दयानन्द द्वारा प्रतिपादित चक्रवर्ती साम्राज्य कैसे प्राप्त कर सकते हैं। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का दृष्टिकोण इसी सकारात्मक चिंतन पर आधारित था

3. सत्य के पुजारी :-

स्वामी श्रद्धानन्द सत्य के ग्रहण करने और असत्य को त्यागने के परम उपासक थे अज्ञान की अवस्था में उनका जीवन विपरीत दिशा की ओर बढता रहा। किन्तु आँख खुलते ही उन्होनें अपने दोषों को उसी प्रकार दूर फेंक दिया जैसे कि कोई गले में पड़े विषधर सर्प को स्वामी जी का सत्य के प्रति कितना आग्रह एवं आदर था कि संन्यास लेते समय **पुत्रैषणा वित्तैषणा लोकैषणा मया परित्यक्ता** बोलते समय अन्त में बोल उठे **लोकैषणा तु मया न परित्यक्ता** है कोई समाज में मिलेगा इतना स्पष्टवादी यथार्थचिंतक ? प्रभु भक्ति एवं मृत्यु से अभय तो स्वामी जी को अपने गुरु ऋषि दयानन्द से ही प्राप्त हुए थे। प्रभुभक्त निश्चित ही मृत्यु से अभय रहता है। ऋषि दयानन्द अपने आप को तोप के मुख के आगे बांध देने पर भी तथा कोई उनकी अंगुलियो को बत्ती बनाकर जला देने से भी सत्य को छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे तो उनका शिष्यनिर्भीक संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द भी गोरे सैनिकों की संगीनों के समाने शान्त भाव से सीना खोलकर तान देते हैं और ललकारते हुए कहते हैं -**सन्यासी का सीना खुला है हिम्मत हो तो चला दो गोली**। यही है मृत्यु को जीतना, ऐसे व्यक्ति ही मृत्युञ्जय कहलाने के पात्र होते हैं।

4. राष्ट्रीय एकता के पक्षधर :-

स्वामी श्रद्धानन्द जी के जीवन में भी अधिक आश्चर्यजनक घटना 4 अप्रैल 1919 को हुई ऐसी घटना न भूतकाल में हुई न भविष्य में होने की संभावना ही है। मुस्लिम नेताओं के आदेश से दो प्रतिनिधि स्वामी श्रद्धानन्द के निवास पर पहूँचे। उन्हें सविनय निवेदन के बाद ससम्मान

गाड़ी पर बैठाकर जामा मस्जिद लाए। प्रधान मौलवी सहित सभी मुसलमानों ने जयघोष के साथ स्वागत किया और नम्र निवेदन किया कि वर्त्तमान विकट समय में मुसलमानों को कर्त्तव्य का उपदेश करें। वेदी पर विराजमान स्वामी श्रद्धानन्द जी ने निम्न समयोपयोगी महत्वपूर्ण चिंतन एक वेद मंत्र के माध्यम से जनसमुदाय को सम्बोधित किया। **त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ अधाते सुम्नमीमहे**। जिसका अर्थ है- हे सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक कृपालु परमात्मन् आप हमारे पिता के सदृश पालक हो ममतामयी माता के समान अनेक प्रकार से हमें सुख प्रदान करते हुए हित चिन्तक हो आपकी छत्र छाया में हमें परम सुख मिलता है। इस प्रकार आपने जामामस्जिद के पवित्र मंच से वेद मन्त्रों द्वारा एकता का सन्देश दिया। राष्ट्रीयता एवं निर्भीकता के कारण ही पंजाब के अमृतसर नगर में उस स्थिति में जबकि जनता जलियांवाला काण्ड से अत्यंत त्रस्त थी, स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अधिवेशन सम्पन्न कराने का अद्भूत साहसिक कर्त्तव्य सफलता पूर्वक निभाया था।

उपसंहारः-

इस प्रकार राष्ट्रीय एकता के प्रबल पक्षधर स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने आजीवन भारतीय समाज में फैली हुई सामाजिक विषमता के विरुद्ध सदैव महती भूमिका निभाई अस्पृश्यता निवारण के लिए उन्होंने ऐसे आदर्श समाज के सामने उपस्थापित किये आज उसका उदाहरण मिलना भी असंभव है। अपनी परंपरागत उपासना पद्धति एवं राष्ट्रीय अस्मिता का परित्याग कर जो भूले भटके भाई-बहन अपनी मूलधारा से बहुत दूर जा चुके थे। उन्हें अपने पूर्व गौरव और महत्ता का परिचय प्रदान कर अपने गले लगाया। ऊंच-नीच की गंभीर खाई को पाटने में उस राष्ट्र संत ने जो अनुपम प्रयत्न किए उन्हें चन्द पंक्तियों में समेटना सर्वथा असंभव है। धार्मिक रु ढिवादिता को सदा के लिए परिसमाप्त कर भारतीय समाज को पूर्व कालीन ऋषि युग का स्मरण करा कर वैदिक विचारधारा का प्राण प्रण से प्रचार करते हुए धर्म के शुद्ध स्वरूप को जनता के सामने रखा। जातिवाद को स्वामी जी स्वस्थ समाज के लिए घोर कलंक मानते थे, यही वजह है उनके द्वारा स्थापित गुरुकुल कांगड़ी(अब विश्वविद्यालय) में पहले आचार्य कक्षा पढ़ते तक किसी बालक की जाति का ज्ञान किसी को हो नहीं पाता था। भेदभाव से कोसों दूर स्वामी जी का व्यक्तित्व इतना महान था कि वे अपने जीवन काल में ही गरीबों के मसीहा माने जाते थे। सुधारवादी आन्दोलन के कारण दिग् दिगंत में फैल रही स्वामी जी की कीर्ति से असंतुष्ट होकर षड़यंत्रकारियों द्वारा एक मदान्ध मुसलमान के हाथों स्वामी जी 23 दिसंबर 1926 को शहीद हो गये। आइये इस अवसर पर संकल्प लें, कि हम राष्ट्रीय अस्मिता की सुरक्षा के लिए यावज्जीवन प्रयत्न करते रहेंगें यही उस महान आत्मा के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

- आचार्य कर्मवीर

वैचारिक

वेद एवं सांसारिक अध्यात्म

डॉ. सत्यपाल सिंह, आई.पी.एस.

विश्व के इतिहास में वेद प्राचीनतम् पुस्तक है तथा भारतीय संस्कृति के अनुसार वेद अपौरुषेय तथा ईश्वरीय ज्ञान है। शब्द नित्य है इसीलिये इसे अक्षरों से बना मानते हैं अक्षर का अर्थ है जिसका नाश न हो। आधुनिक विज्ञान के हिसाब से ऊर्जा का नाश नहीं होता उसका सिर्फ रुपान्तर होता रहता है। ज्ञान भी इस तरह से एक ऊर्जा है। इस ज्ञान का मूल स्रोत ईश्वर है। उदाहरणार्थ हमने पढ़ना लिखना किसी गुरु से सीखा, हमारे गुरु ने अपने गुरु से... इस प्रकार पीछे जाते हुए जब दुनियां में धरती पर प्रथम मानव ने जन्म लिया तो उसका गुरु तब केवल ईश्वर ही हो सकता है। योग दर्शनकार कहता है :

सः पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात् ।

अर्थात् ईश्वर काल की मर्यादा से परे मानव का सर्वप्रथम गुरु है। ईश्वर को ज्ञान देने के लिए बोलने की अथवा आने जाने की जरुरत नहीं है - वह तो हृदय में ज्ञान का प्रकाश देता है। अलग-अलग चारों वेदों का चार ऋषियों (अग्नि, वायु, आदित्य एवं अंगिरा) की आत्माओं में एक साथ ही प्रकटन हुआ।

वेद का ज्ञान सार्वकालिक, सार्वभौमिक, वैज्ञानिक तथा कल्याणकारक है। वेदों में किसी ऐतिहासिक देश, जाति, धर्म, जगह तथा नाम का वर्णन नहीं है। उस पर मानव मात्र बराबर का अधिकार है। वेद संसार की सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। मनु भगवान् उसे **"सर्व ज्ञान मयो हि सः"** (१/१२६) अर्थात् सब प्रकार के ज्ञान से पूर्ण मानते हैं। अथर्ववेद घोषणा करता है -**"यस्मिन् वेदा निहिता विश्वरुपाः"** (४/३५/६) अर्थात् विश्व का रुप वेद में निहित है और इसलिए प्राचीन काल से ही वेदों का पढ़ना-पढ़ाना व सुनना-सुनाना आर्य संस्कृति का एक अभिन्न अंग रहा है। वेद विहित कर्मों को ही आर्यों ने धर्म का नाम दिया था।

'आर्य' शब्द का अर्थ श्रेष्ठ है, ज्ञानवान् है। 'आर्यः ईश्वर-पुत्रः' अर्थात् ईश्वर के पुत्र को आर्य कहा गया है। इस देश में अंग्रेजों के आने से पहले **'आर्य'** शब्द कहीं भी किसी जाति अथवा नस्ल के लिए प्रयोग नहीं हुआ। यह तो विदेशी इतिहासकारों तथा उनके देशीचाटुकारों के राजनैतिक तथा सांस्कृतिक षड़यन्त्र के कारण हुआ। बौद्धों का आर्य सत्य किसी जाति का सत्य नहीं अपितु मनुष्य मात्र का श्रेष्ठ सत्य है। इसी प्रकार 'आर्य' संबोधन किसी जाति के लिए न होकर आदर के लिये प्रयोग होता था। रामायण तथा महाभारत के जमाने में आर्यपुत्र तथा आर्यपुत्री का प्रयोग सामान्य था। कवि कालिदास के **'आभिज्ञानशाकुन्तलम्'** में शकुन्तला दुष्यंत को आर्यपुत्र कहती है, 'आर्य' का व्यवहार श्वसुर के लिए तथा 'आर्या' का सास के लिए आदर के लिए होता था। जब दुष्यंत शकुन्तला को पहचानने से इंकार कर देता है तो शकुन्तला उसी दुष्यंत को 'अनार्य' कहती है। यदि दुष्यंत आर्य नस्ल का होता तो क्या व्यक्ति एक ही वर्ष के अन्दर अपनी नस्ल बदल सकता है?

ऋग्वेद ने तो ईश्वरीय घोषणा की है - **'अहम् भूमिमाददाम् आर्याय'** (४/२६/२) भगवान् ने तो यह धरती आर्य के लिए ही दी है। इसलिये तो वैदिक संस्कृति बार बार पर उद्घोष करती रही : **'इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।'** (ऋ. ९/६३/५) अर्थात् इन्द्र (देवत्व) को बढ़ाने के लिए राक्षसों का दुष्टों का संहार करो तथा सारे विश्व को आर्य बनाओ। जब से हम लोग अपने को आर्य कहना भूल गए, हमारा अपने ही वेद शास्त्र, उपनिषद् रामायण, महाभारत, पुराण, गीता आदि संस्कृति साहित्य से नाता ही टूट गया। इनमें से किसी भी पुस्तक में भारत देश के लोगों ने अपने को हिन्दू नहीं कहा। सब जगह हम अपने को आर्य कहकर गौरवान्वित होते रहे। अगर हमारा नाम आर्य है, तो हमें श्रेष्ठ बनना ही होगा। अनार्यत्व (अनाड़ीपन, अज्ञानता) को लात मारनी होगी। हमें दुष्टों, दैत्यों, राक्षसों व रावणों का हनन करना ही होगा। जब से इस देश के लोगों ने-विदेशियों के कारण अथवा अपनी

गलती के कारण अपने को बेचारा हिन्दू बना लिया, हमारी वीरता और वैभव खत्म हो गए। पिछले लगभग डेढ़ हजार वर्षों का इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब से आर्यावर्त हिन्दुस्तान बन गया, हिन्दुओं का देश बन गया इस पर विदेशी जातियों के आक्रमण पर आक्रमण होने लगे। इस देश की संपत्ति को लूटा गया, विशाल व दुर्लभ साहित्य को जलाया गया और धीरे-धीरे यह देश विदेशियों का - जिसको हमारे प्राचीन साहित्य ने म्लेच्छ कहा था - गुलाम बन गया। जिस भगवत् गीता के अमृतमय उपदेश ने किंकर्त्तव्य विमूढ़ मोहग्रस्त अर्जुन को युद्ध करने के लिए खड़ा किया था- उसी गीता के करोड़ों भक्त पिछले एक डेढ़ हजार वर्षों में कायर, कमजोर, दीन-हीन, नपुंसक बन करके अपनी जिंदगी गुजारते रहे। हमारे सारे देवी देवताओं के हाथों में कोई न कोई शस्त्र है पर उनकी प्रतिदिन की पूजा भी हमें अन्याय का विरोध करने की प्रेरणा न दे सकी। जो पौधा अपने मूल से उखड़ जाता है उसे वरुण देव का वर्षा जल, सूर्य भगवान् का ताप तथा मन्द शीतल समीर भी तो जीवित नहीं रख सकता। आर्य हमारा नाम था, आर्यत्व हमारा मूल था, वेद हमारा धर्म था... उससे दूर जाकर हमारा यह हाल होना ही था। अभी भी समय है कि हम अपने को फिर से आर्य कहकर पुनः गौरवान्वित हो।

मानव जीवन की सारी विधाएँ व विद्याएं वेदों के अन्दर बीज रूप से विद्यमान है। मनुष्य जीवन के चारों पुरुषार्थों - धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष का ज्ञान तथा उन्हें प्राप्त करने का मार्ग वेद ने बताया है। अध्यात्म का अर्थ मोक्ष प्राप्ति नहीं है - मोक्ष भी अध्यात्म का एक भाग है। अध्यात्म तो एक मार्ग हैं जहां हम अपने को जान पाते हैं, या जान सकते हैं। अध्यात्म आत्म तत्व के साक्षात्कार का देवत्व प्राप्ति का महामार्ग है। हम कौन है, कहां से आए हैं, कहां जाना है, आदि प्रश्नों का उत्तर अध्यात्म का विषय है। वेद कहता है।

ओ३म् कोऽसि, कतमोऽसि, कस्यासि, को नामाऽसि।

अर्थात् तू कौन है, मैं कौन हूँ ? तू कौन सा है, मैं कौन सा हूँ? तू किसका है, मैं किसका हूँ ? तू क्या नाम या शक्ति वाला है, मैं क्या सामर्थ्य वाला हूँ ? वेद अपनी आत्मा तथा विश्व आत्मा को जानने की बात करता है। वेद का अध्यात्म तो वनों पर्वतीय कन्दराओं का अध्यात्म नहीं है। वैदिक अध्यात्म मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष की बात करता है। इसीलिये मैं उसे सांसारिक अध्यात्म कहता हूँ। उदाहरण के लिए हम वेद भगवान् से प्रार्थना करते हैं -

ओ३म् स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम्।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यम् दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् ।।

अर्थात्, हे संस्कारित लोगों को पवित्र करने वाली वेद माता मुझे वर दो ताकि मैं लम्बी आयु, बल (प्राण शक्ति), उत्तम संतान-पशु आदि यश, धन, ब्रह्म (वेद) ज्ञान पाकर ब्रह्मलोक (मोक्ष-प्राप्ति) का अधिकारी बन सकूं। वेद के एक-एक पद में एक-एक शब्द में, एक-एक अक्षर में उनके क्रमों में बड़ा विज्ञान निहित है। शास्त्र ने घोषणा की **"बुद्धिपूर्वा वाक्य कृतिर्वेदे"**। अर्थात् वेद का प्रत्येक वाक्य बुद्धिपूर्वक है। मनु महाराज तो वेदों को परम प्रमाण मानकर कहते हैं : धर्म जिज्ञासमानानाम् प्रमाणं परमं श्रुतिः। अर्थात् धर्म के जिज्ञासुओं के लिए इस विश्व में सबसे बड़ा प्रमाण परम श्रुति (वेद) है। मनु महाराज यह भी कहते हैं कि **"यस्तर्केणा-नुसंधत्ते स धर्मः वेद नेतर"** अर्थात् जो तर्क से अनुसंधान करता है वह ही धर्म के गूढ़ तत्व को जान सकता है।

अथर्ववेद इसलिए कह रहा है कि हे परम देव मुझे पहले दीर्घ आयु दे। फिर स्वस्थ-सुन्दर मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ दे। गृहस्थ आश्रम में मुझे उत्तम संतान मिले गौ, घोड़े आदि पशुओं का सान्निध्य हो। इस व्यक्तिगत व पारिवारिक सुख शान्ति के बाद मुझे चारों दिशाओं में यश कीर्ति मिले। कीर्ति के बाद मुझे धन की भी कोई कमी न रहे। कीर्ति और वैभव के पश्चात् मुझे ज्ञान मिले ताकि मैं बाद में ब्रह्मलोक का अधिकारी बन सकूं। वेद का उपदेश स्पष्ट है कि जो लोग धन के लिए अपने स्वास्थ्य, परिवार तथा कीर्ति को दांव पर लगाते हैं या उनकी उपेक्षा करते हैं, उन्हें बाद में पश्चाताप करना पड़ता है। धन (की अधिकता) ने कभी किसी को तृप्त नहीं किया। आत्म ज्ञान के लिए व्यक्ति को पहली सीढ़ियों से गुजरना है। यही बात तो यजुर्वेद

के महामृत्युञ्जय मंत्र में और भी स्पष्ट रुप से कही गयी है -

ओ३म् त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ।।

अर्थात् हे सारे संसार को सुगन्ध व पुष्टि देने वाले प्रभु ! मुझे खरबुजे की तरह बन्धन से, मृत्यु से छुड़ा कर अमृत को पान कराओ । खरबुजा तभी बन्धन से छूटता है जब तक वह पक जाता है और पकने के लिए उसे बेल से जुड़ना ही पड़ता है, वृद्धि व मिठास के लिए उससे रस लेना पड़ता है । ठीक इसी तरह से व्यक्ति को अपने विकास, मिठास तथा परिपक्वता के लिए सांसारिक बन्धनों से बचना आवश्यक है। नहीं तो विकास, मिठास व पूर्णता में कहीं कमी रह ही जाएगी । बिना इनके आत्म ज्ञान कैसे होगा और कैसे होगी मुक्ति की प्राप्ति ?

योग शास्त्र में भगवान् पतञ्जलि ने योग के लिए आत्मज्ञान के लिए अध्यात्म की उच्चता के लिए आठ अंगों का पालन आवश्यक बताया । बिना पांच यमों (सामाजिक अनुशासन) व पांच नियमों (व्यक्तिगत अनुशासन) के कोई भी व्यक्ति अध्यात्म की सीढ़ी पर नहीं चढ़ सकता । पूरा योग ही एक अनुशासन का नाम है। शासन दूसरों पर होता है पर अनुशासन का अर्थ अपने ऊपर- अपने व इन्द्रियों के ऊपर-शासन का नाम है । आज तो योग शिक्षक बनकर अध्यात्म मार्ग का वस्तुतः उपहास कर रहे हैं । बिना यम नियमों का खान-पान के नियन्त्रण के बिना भी आज-कल के लोग मेडिटेशन (ध्यान कहना तो गलत ही होगा) कर के चन्द दिनों में विभिन्न प्रकार का प्रकाश रखने का आत्म ढोंग करते हैं । ऋग्वेद भी प्रेरणा दे रहा है 'मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्' अर्थात् मनुष्य बनो और देवताओं को पैदा करो । इंसानियत व देवत्व की प्राप्ति के लिए हमें प्रकाश (ज्ञान) के पीछे चलना होगा । रोशनी के रास्ते की रक्षा कर उसे आगे बढ़ाना होगा और यह सब दुनियां के ताने बाने बुनते हुए, त्यागपूर्वक भोग करते हुए ज्ञान की मशाल हाथ में लेकर अज्ञान, अन्याय व अभाव के अंधकार को चीरना होगा । तभी हम आत्मज्ञान के अधिकारी बनेंगे और तभी अध्यात्म के दिव्य रस का पान हम कर सकेंगे । मित्रों ! यह देश आत्मज्ञान व अध्यात्मिक के कारण दुनियां का कभी सिरमौर था । यह तभी तक रहा जब तक वेद का दीपक घर-घर में जलता रहा । अपनी शांति के लिए, अपने बच्चों की समृद्धि के लिए, अपने देश की प्रगति के लिए आओ, आज पुनः हम वेद की ज्योति घर-घर में पहुंचायें । जिस दिन वेद का अध्यात्म संसार में फैलेगा, तब लोगों के हृदयों से बैर, वैमनस्य दूर होकर तथा आतंकवाद और अपराध खत्म होकर विश्व एक कुटुम्ब बन पाएगा। एक नीड बन जाएगा।

पता : पूर्व कमिश्नर, मुम्बई

आयुर्वेद का सन्देश

पथ्ये सति गदार्त्तस्यकिमौषधनिषेवणैः ।
पथ्येऽसति गदार्त्तस्य किमौषधनिषेवणैः ।। (लोलिम्बराज)

भावार्थ - आयुर्वेद विज्ञान की वैज्ञानिकता का इससे बढ़कर भला और क्या उदाहरण हो सकता है कि - जीवन रक्षा के सिद्धान्तों की जहाँ विवेचना ऋषि महर्षियों द्वारा की गयी है, वहाँ खुला चैलेन्ज देकर यह कहा है कि - यदि मनुष्य पथ्य (खान-पान, रहन-सहनादि में) पूर्णतया रखे तो फिर भला औषधियाँ सेवन करने की उसे आवश्यकता ही क्या? इस बात को आधुनिक विज्ञान ने भी सिद्ध कर दिया है कि - खान-पान आहार-विहार चित्त वृत्तियों का स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है । अतः पथ्य का पालन समग्रतया करना चाहिए । और यदि मनुष्य अपने ऊपर संयम रख ही नहीं सकता है तो पुनः औषधियाँ व्यर्थ है । लाख दवाइयाँ आप ले लीजिये, परन्तु पथ्याभाव के कारण आप कदापि लाभान्वित नहीं हो सकते हैं। आयुर्वेद के इस सुस्वास्थ्य विषयक सन्देश पर आज भारतवर्ष के सभी नागरिकों को विचार करने की नितान्त आवश्यकता है ।

- सुभाषित सौरभ

आध्यात्मिक

आर्ष योग की सातवीं सीढ़ी-"ध्यान"

– आचार्य आर्यनरेश,
वैदिक गवेषक

अन्य सभी विद्याओं के समान योग विद्या के मूल में भगवान् की पावन वाणी वेद ही है। जैसे अथर्ववेद में आया है - **इमं यवमष्टायोगैः**। यहां योग शब्द का अर्थ समाधि अर्थात् अपने आपको, अपने शरीर को तथा समस्त संसार को 'शून्य' भूले हुए के समान स्थिति होकर केवल परमात्मा के ही आनन्द की अनुभूति होना। जिस तरह से लोहा आग में रखने के कुछ काल पश्चात् अपना स्वरूप खोकर आग जैसा ही हो जाता है, जब तक कि वह आग में रहता है। ठीके ऐसे ही ध्यान करने वाला योगी जब तक समाधि की स्थिति या काल रहता है। ईश्वर के आनन्द मे गुमसुम होकर, बाहर सब कुछ भूल जाता है। इतना ही नहीं अपने आत्मा को भी भूला हुआ सा केवल भगवान के ही आनन्द में मग्न रहता है। इसी का नाम वास्तविक योग है, शेष विभिन्न आसन आदि को यौगिक व्यायाम कहना चाहिए।

यम से लेकर प्राणायाम तक बहिरङ्ग योग व प्रत्याहार से लेकर समाधि तक को अन्तरङ्ग योग कह सकते हैं। बहिरङ्ग योग इसलिये क्योंकि उनका सम्बन्ध अधिकतर शरीर प्राण व आचार सम्बन्धी व्यवहार के साथ है। प्रत्याहार से अतरङ्ग योग प्रारम्भ होता है क्योंकि इससे अन्तःकरण के आचार मन को स्थिर व वश में किया जाता है, जिस पर धारणा, ध्यान व समाधि की स्थिति बनती है। सात्विक भोजन, सात्विक विचार तथा न्यायपूर्ण सात्विक व्यवहार मन को पवित्र करने के प्रमुख साधन है। वेदज्ञ साधर्मों का सत्कार, सुधर्मी धनाढयों से प्यार, दुःखीजनों के प्रति करुणा का व्यवहार और अपुण्यजनों के कल्याण हेतु ईशाधार दूर से नमस्कार अर्थात् उपेक्षा। यहां उपेक्षा का अर्थ उन पापियों को यूं ही आजकल की तरह बिना दण्ड दिए छोड़ना नहीं है अपितु उपेक्षारूपी दण्ड देना है। जी हाँ। उपेक्षा भी एक बहुत बड़ा दण्ड है। यही उपेक्षा कभी-कभी दुष्टों को या तो देवता बना देती है अथवा सद्गति (मृत्यु) करवा देही है। यदि किसी पापी के साथ घर-बाहर वाले, अपने व पराये कोई भी बात न करेंगे एवं उसे देख कर सभी अपने सम्बन्ध तोड़कर मुंह फेर लेंगे, तो इससे या तो वह सुधर जाएगा अथवा ऐसे एकाकी जीवन से जिसमें अपनी व बच्चे भी मुंह फेर रहे हैं देखकर आतमा हत्या कर लेगा।

मन को प्राणायाम से विचार शून्य करने का नाम प्रत्याहार है। एक बात सदा ध्यान में रखें, कपालभाति, भस्त्रिका, लोम-विलोम अथवा सूर्य चन्द्र आदि सभी प्राण क्रियाएं है, एवं प्राणायाम केवल योगदर्शनानुसार चार है। बाह्य, अभ्यन्तर, स्तम्भवृत्ति, बाह्याभ्यन्तर विषया होती है। प्राणायामों और प्राण क्रियाओं में मौलिक-अन्तर यह है कि क्रियाओं में प्राण को रोकना नहीं पड़ता, परन्तु प्राणायामों में बाह्य, भीतर अथवा यथा स्थिति प्राण रोकना पड़ता है। प्राणायाम से प्रत्याहार की सिद्धि के पश्चात शरीर में किसी एक स्थान यथा आज्ञाचक्र (दोनों आँखों के मध्य), नासिकाअग्र अथवा हृदयदेश (दोनों स्तनों के मध्य जो गति है) आदि स्थानों पर उसे विचार शून्य मन को धरने का नाम धारणा है। जैसे कोई पहियों वाली रिक्शे आपकी ओर सरकती आ रही है, तो अपने उसका हैंडल पकड़ कर स्थिर किया, अपने अधीन किया। यह हुआ प्रत्याहार; और फिर इसे अपनी यात्रा पूर्ण करने हेतु कोई ठीक दिशा में मोड़कर खड़ाकर दिया, यह हुआ धारणा। फिर उसे ठीक दिशा व स्थान पर धरे हुए पर बैठकर आपने अपनी मंजिल की ओर चलना प्रारम्भ किया। यह हुआ ध्यान। चित्र या मूर्ति से ध्यान एकाग्र न होकर उसके अङ्गों में घूमता रहता है, परन्तु ईश गुणों में ध्यान होने से प्रभु का गुण गाते-गाते उसी में एकाग्र होकर रखा जाता है। ओ३म् ध्यान करते

समय ईश्वर को छोड़कर किसी गुरु किसी पदार्थ यथा मालादि व किसी अष्ट वस्तु की बात को चर्चा, चिन्ता तथा चित्र न रहना चाहिए केवल अर्थपूर्वक ओ३म् का जाप करना या उपासना विषयक गायत्री आदि मन्त्र का जाप करना चाहिए।

ध्यान योग में ध्यान किसका व कैसे ?

(सभी ऋषि, देवता, यति तथा गुरु किस का ध्यान किया करते थे?)

ऋषि पतञ्जलि के अनुसार योग का अर्थ है सर्वव्यापक, निराकार, वेदज्ञान दाता, कर्मफल प्रदाता, सर्वक्लेश आदि से पृथक सृष्टिकर्ता ओम प्रभु का ध्यान। योग के नाम से ध्यान करने वालों को सर्वप्रथम यह जानना आवश्यक है कि वे यह अच्छी प्रकार से जान लें कि जिसके लिए ध्यान कर रहे हैं अथवा करना चाहते हैं वह 'आनन्दप्रदाता' ईश्वर क्या है, कहां है एवं कैसा है ? ऋषि दयानन्द ध्यान करते थे, गुरुनानकजी ध्यान करते थे, श्रीकृष्ण, श्रीराम, श्री शिव एवं श्री ब्रह्मा सभी ध्यान भक्ति करते थे। उनके चित्र भी ध्यान करते हुए मिलते हैं यथा शिव, ब्रह्मा, कृष्ण व देव दयानन्द। जो ध्यान भक्ति कर रहा है या करता था उसे आप भक्त कहेंगे या कि भगवान ? उत्तर मिला कि क्योंकि वे ध्यान भक्ति करते थे अतः वे भक्त हुए और जिसका वे ध्यान करते थे वह भगवान्। जब आप बुद्धि पूर्वक विचार करेंगे तो आपको यह पता चलेगा कि वे सब देव ओ३म् का ही ध्यान करते थे। उसके ऐतिहासिक ग्रन्थों से भी यही सिद्ध होता है। चाहे रामायण, गीता व गुरुग्रन्थ साहब को उठाकर देख लें। इसी ओ३म् नाम का अर्थपूर्वक जाप करते हुए ध्यान करने का उपदेश ऋषि पतञ्जलि योग दर्शन में करते हैं यथा **'तस्य वाचकः प्रणवः तज्जपस्त दर्थभावनम्'** अर्थात् ईश का मुख्य नाम ओ३म् है एवं ध्यान-योग हेतु उसी के गुणों का अर्थ-पूर्वक जाप करना चाहिए।

ध्यान का अर्थ ऋषि पतञ्जलि के अनुसार अर्थ है - **"तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्"** अर्थात् जिस स्थान पर धारण (मन को केन्द्र किया है) की स्थिति बनाई है, उसी स्थान पर परमेश्वर को व्याप्त जानकर, उसके मुख्य नाम ओ३म् का अर्थपूर्वक अत्यन्त श्रद्धा व प्रेमभक्ति से विचार करना। इस भावना के साथ भगवान् हमारी बात (जाप) सुन रहा है जो हम कह रहे हैं। ऐसा भावात्मक सम्बन्ध बनाते हुए जैसे समुद्र में नदी प्रवेश करती है, उसी तरह प्राणायाम द्वारा अपने आपको बाहर के सब विचारों व विषयों से पृथक करके केवल परमात्मा की ओर बढ़ते जाना। जैसे जिस व्यक्ति को जिस वस्तु व व्यक्ति की इच्छा, आवश्यकता तथा तड़प होती है तो वह केवल उसी के ही ध्यान में मग्न रहता (या चिन्तित रहता) है। उसे संसार की अन्य सब प्रज्वलित लग्न, ध्याता को ईश्वर के प्रति होनी चाहिए। यदि ईश्वर को मिलने की तड़प ही नहीं तो फिर ऐसा ध्यान मात्र समय का विनाश व ध्यान के नाम पर अपने को एक धोखा है। भगवान् भी तो जानता है कि यह एक रोज की चर्चा से बैठा तो है पर इसका उद्देश्य उससे मिलने का नहीं मात्र उस समय पर उपस्थित (हाजरी) लगाने एवं खानापूर्ति करने का ही है। सो ऐसी ढुलमुल मानसिक स्थिति में क्या तो ध्यान लगेगा वे क्या उस भगवान् से मिलेगा ? साधक वृन्द ! ध्यान की विधि जो बताई जा रही है इसे जानना मात्र ध्यान नहीं, इसे जीवन में उतारना ध्यान है। प्रतिदिन के कर्मों को करते हुए यह ध्यान रखना कि प्रभु सर्वव्यापक रूप से हमारे साथ है, ऐसा ध्यान रखना भी योग ध्यान नहीं, क्योंकि यह तो मात्र आस्तिक रहते बनते हुए अपने बाह्य व आन्तरिक क्रियाओं का सुधार है जिसे 'ध्यान' नहीं, अपितु यम-नियम कहते हैं। ध्यान करना तो वस्तुतः उस क्रिया का नाम है जो प्रातः, सायं शौच स्नानादि से शुद्ध व विचारों से पवित्र होकर एकान्त, शान्त, पवित्र स्थान व सुखकारी कोमल आसन पर बैठकर ओ३म् प्रभु की करोड़ों सुविधाओं के बदले उसका धन्यवाद करते हुए केवल उसी को पाने की तीव्र इच्छा से **ओ३म् तत्सत्** अथवा गायत्री मन्त्र को संसार के सब लोगों हेतु गायत्री अर्थ-विज्ञान महाध्यान विज्ञान हो सकता है, यदि विधि आती है तो ओ३म् गायत्री मन्त्र संसार के अधिकतर लोगों को आता है अतः इनका अर्थ स्मरण करके गायत्री विज्ञान को सिद्ध करने का प्रयास करें। इसके लिए आवश्यक है कि गायत्री के प्रत्येक शब्द का अर्थ याद होना चाहिए।

पता - उद्‌गीथ साधना स्थली, हिमाचल प्रदेश

विश्लेषणात्मक

“ईश्वर, वेद और ऋषि दयानन्द के सच्चे अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द”

- मनमोहन कुमार आर्य

आर्यसमाज के इतिहास में ऋषि दयानन्द के बाद स्वामी श्रद्धानन्द जी का प्रमुख स्थान है। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने बरेली में ऋषि दयानन्द जी के दर्शन किये थे और उनके उद्देश्यों व कार्यों को यथार्थ रुप में जाना व समझा था। उन्होंने मन वचन व कर्म से उनके कार्यों को पूरा करने के लिये यथासम्भव कार्य किये। उनके जीवन पर दृष्टि जाते हैं तो हमें उनका एक महत्तम कार्य प्राचीन वैदिक शिक्षा पद्धति की देन गुरुकुल पद्धति को पुनर्जीवित कर उसकी हरिद्वार के कांगड़ी ग्राम स्थापना करना था। यह कार्य कितना कठिन व जटिल था, इनका अनुमान भी हम नहीं लगा सकते। प्रथम कार्य तो गुरुकुल के लिये वृहद भूभाग की व्यवस्था सहित वहां भवनों के निर्माण के लिये धन संग्रह करना था। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने इस कार्य को जिस प्रकार उत्साह, श्रद्धा तथा त्यागपूर्वक किया वह प्रशंसनीय एवं प्रेरणादायक है। इतिहास में इस प्रकार के उदाहरण मिलना कठिन है। गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार की स्थापना सन् १९०२ में की गई। बहुत तीव्रता से गुरुकुल ने प्रगति की और यह देश का शिक्षा का एक आदर्श राष्ट्रीय संस्तान बना। इसकी कीर्ति व यश का अनुमान हम इसी बात से लगा सकते हैं कि इसकी सुगन्ध को इंग्लैंड में बैठ लोगों ने भी अनुभव किया और वह ब्रिटिश राजनेता जेम्स रैमसे मैकडोनाल्ड (१८६६-१९३७) के नेतृत्व में कुछ प्रतिनिधि गुरुकुल कांगड़ी को देखने हरिद्वार पधारे थे। श्री रैमसे मैकडोनाल्ड बाद में इंग्लैंड के प्रधानमंत्री बने थे। अपनी गुरुकुल की यात्रा में उन्हें लिखा था कि यदि किसी को जीवित ईसामसीह के दर्शन करने हों तो उसे स्वामी श्रद्धानन्द जी के दर्शन करने चाहिये। न केवल रैमसे मैकडोनाल्ड अपितु उन दिनों के वायसराय चेम्सफोर्ड भी गुरुकुल कांगड़ी में आये थे। उन्होंने गुरुकुल को देखा था और जाते हुए गुरुकुल को सरकारी आर्थिक सहायता का प्रस्ताव किया था। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने अनेक कारणों से वायसराय जी की ओर से गुरुकुल को प्रस्तावित आर्थिक सहायता को विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया था। इस घटना से यह अनुमान लगता है कि उन दिनों के हमारे पूर्वजों तप, त्याग, पुरुषार्थ में विश्वास रखते थे और सुविधाभोगी नहीं थे अन्यथा आज हम इस प्रकार के प्रस्ताव को ठुकराने की कल्पना भी नहीं कर सकते। बाद में गुरुकुल के अधिकारियों ने सरकार से मान्यता एवं आर्थिक सहायता प्राप्त की। आज का गुरुकुल स्वामी श्रद्धानन्द और आचार्य रामदेव के स्वप्नों का गुरुकुल नहीं है। गुरुकुल का उद्देश्य वेद, वैदिक धर्म और संस्कृति की रक्षा करने के साथ वेद का देश, देशान्तर में प्रचार करना है। आज यह उद्देस्य किस सीमा तक पूरा हो रहा है, सभी आर्यजन इससे भली भांति परिचित हैं। अतीत में गुरुकुल ने हमें अनेक वैदिक विद्वान्, वेद भाष्यकार, पत्रकार, शिक्षा शास्त्री, देशभक्त, स्वतन्त्रता सेनानी, समाज सुधारक, शिक्षक, राजनेता, व्यवसायी आदि दिये हैं। देश की स्वतन्त्रता के बाद हम प्रायः सभी क्षेत्रों में नैतिक मूल्यों का ह्रास देखते हैं। यही स्थिति आर्यसमाज और स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रिय गुरुकुल की भी हुई है। आज स्थिति यह है कि आर्यसमाज व देश में स्वामी श्रद्धानन्द जी के समान योग्य, त्यागी, तपस्वी व

समर्पित विद्वान् नेता नहीं है जिसके लिये ईश्वर, वेद और आर्यसमाज से बढ़कर कुछ न हो तथा वह वेद और ऋषि दयानन्द के उद्देश्यानुसार कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के उद्देश्य की पूर्ति के लिये सर्वात्मा उच्च योग्यता को धारण किये होकर संघर्षरत हो।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने वेद और आर्यसमाज की आध्यात्मिक एवं समाज सुधार की विचारधारा का सर्वाधिक प्रचार किया। वह आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान भी रहे। यह सभा आर्यसमाज की सबसे अधिक प्रभावशाली एवं गतिशील संस्था थी। आपने समाज सुधार के सभी कार्यों को पूरी लगन एवं संगठित रुप से किया। अपने जीवन काल में अनेक गुरुकुलों को स्थापित किया। ब्रह्मचारियों को वेदाध्ययन एवं वेदप्रचार की प्रेरणा की। आपका अपना जीवन भी वेद प्रचार का जीवन्त उदाहरण था जिससे लोग प्रेरणा लेते थे। आप समाज में दलित समस्या से पूर्णतः परिचित थे। जन्मना, जातिवाद की बीमारी के दुष्प्रभावों से भी आप परिचित थे। आपने जन्मना जातिवाद, भेदभाव व छुआछूत के उन्मूलन के लिये भी कार्य किया। डॉ. अम्बेडकर भी स्वामी जी के जाति सुधार एवं दलितोद्धार के कार्यों के प्रशंसक थे। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी आपका महत्वपूर्ण योगदान रहा। आपने 'सद्धर्म प्रचारक' नामक उर्दू पत्र का प्रकाशन किया था। बाद में राष्ट्रीय एकता की कड़ी हिन्दी की महत्ता से परिचित होने पर आपने घाटा उठाकर भी इसे हिन्दी में प्रकाशित करना आरम्भर कर दिया था। एक प्रकार से स्वामी श्रद्धानन्द जी ने पंजाब के उर्दू भाषी हिन्दूओं को देश की एकता का आधार हिन्दी भाषा पढ़ाई थी। आपका प्रेस लाखों रुपये मूल्य का था जिसे आपने आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब को दान कर दिया था। आप देश के प्रेरणादायक सर्वस्व दानी धर्मप्रचारक व सामाजिक नेता थे।

स्वामी श्रद्धानन्द जी जिन दिनों जालंधर में वकालत करते थे, उन दिनों आपकी वकालत खूब चलती थी। आर्यसमाज से प्रेम व धर्म प्रचार के कार्यों की आवश्यकता का विचार कर आपने अपनी वकालत की कमाई पर लात मारकर वेद प्रचार के कार्य को अपनाया था। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने जिस त्याग भावना का परिचय दिया, ऐसे लोग कम ही हुए हैं। आपकी जालन्धर में एक बड़ी कोठी थी। इस पर आपके बच्चों का उत्तराधिकार था। आपके दो पुत्र हरिश व इन्द्र तथा तीन पुत्रियां थी। इस सम्पत्ति के मोह पर भी आपने विजय पाई थी और अपने पुत्रों को सहमत कर अपनी जालन्धर की इस कोठी को भी गुरुकुल कांगड़ी को दान देकर 'सर्वमेघ यज्ञ' किया था। ऐसे महान चरित्र के धनी पूर्वजों के होते हुए हम आर्यसमाज में जब पदों के लिये लोगों को गुटबाजी व अधर्माचरण करते हुए देखते हैं तो हमें दुःख होता है। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने इन कार्यों को करते हुए, शुद्धि का कार्य भी किया। शुद्धि का अर्थ है कि अपने धर्म-बन्धु भय, प्रलोभन, छल व अज्ञान से विधर्मियों द्वारा बलात् विधर्मी बना लिये गये होते हैं, उन्हें वैदिक धर्म की श्रेष्ठता व ज्येष्ठता समझाकर पुनः अपने पूर्वजों के धर्म में प्रविष्ट कराना। यह कार्य विधर्मियों के अतीत के अनैतिक कार्यों का निवारण होता है। ऋषि दयानन्द ने वेद की कृण्वन्तो विश्वमार्यम् आदेश के अनुसार इसकी प्रेरणा की थी। यदि शुद्धि का कार्य न किया जाये तो हमारे विभिन्न मतों के बन्धु सत्य मत व सद्धर्म से परिचित न होने के कारण अभ्युदय एवं निःश्रेयस को प्राप्त करने सहित धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष एवं अपनी कामनाओं को सिद्ध नहीं कर सकते। आर्यसमाज ही विश्व का ऐसा एकमात्र संगठन है जो विश्व को सच्चे ईश्वर व आत्मा का स्वरुप बताने के साथ ईश्वर की सच्ची उपासना करना सिखाता है जिससे मनुष्य ईश्वर का प्रत्यक्ष व साक्षात्कार कर अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने ईश्वर, वेद और ऋषि दयानन्द की भावनाओं को समझकर इनका प्रचार किया था और इसमें अपूर्व सफलता प्राप्त की थी। यदि यह कार्य स्वामी श्रद्धानन्द की भावनाओं के अनुरुप जारी रखा जाता तो शायद पाकिस्तान का निर्माण न होता और हमारा भारत खण्डित न होकर अखण्ड भारत बना रहता।

स्वामी श्रद्धानन्द जी का देश की स्वतन्त्रता के आन्दोलन में भी सराहनीय योगदान है। गांधी जी उन्हें अपना बड़ा भाई मानते थे। शायद यह कथन मात्र रहा हो।

बाद में स्वामी श्रद्धानन्द जी को देश व समाज के व्यापक हित में कांग्रेस से त्याग पत्र देना पड़ा था। जिन दिनों अंग्रेजों द्वारा रालेट एक्ट को लागू किया जा रहा था, देश भर में विरोध हो रहा था। उन दिनों दिल्ली में रालेट एक्ट के विरोध में आन्दोलन का नेतृत्व स्वामी श्रद्धानन्द जी के मजबूत हाथों में था। रालेट एक्ट के विरोद में दिल्ली में एक दिन पूर्ण हड़ताल की गई। सारा बाजार व व्यवसायिक प्रतिष्ठान बन्द थे। दिल्ली में एक जुलूस निकाला गया था जिसका नेतृत्व स्वामी श्रद्धानन्द जी ने किया। यह जुलूस चांदनी चौक में लाल किले की ओर बढ़ रहा था। तभी अंग्रेजों के गुरखा सैनिक सामने आये और स्वामी श्रद्धानन्द जी को आगे बढ़ने से रोक दिया। स्वामी श्रद्धानन्द जी भीड़ चीरं कर सैकिों के सामने आये तो सैनिकों ने अपनी बन्दूकों की सगीने स्वामी श्रद्धानन्द जी छाती पर तान दी। निर्भीक स्वामी जी ने अपनी छाती खोली और दहाड़ लगाकर उन सैनिकों को कहा था - **"हिम्मत है तो मेरी छाती पर गोली चलाओ।"** तभी वहां एक अंग्रेज पुलिस अधिकारी घोड़े पर पहुंचा। उसने सैनिकों को बन्दूकें नीचे कर लने को कहा। इससे एक बहुत बड़ी दुर्घटना होते होते टल गई।

इस घटना ने स्वामी श्रद्धानन्द जी को दिल्ली के बेताज बादशाह बना दिया था। उनके इस शौर्य और देश पर बलिदान होने की साहसिक भावना से प्रभावित होकर जामा मस्जिद के इमाम ने उन्हें मुस्लिम धार्मिक लोगों को सम्बोधित करने के लिये आमंत्रित किया था। स्वामी जी जामा मस्जिद पहुंचे थे और उसके मिम्बर से उन्होंने वेदमन्त्र **"ओ३म् त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभुविथ अधा ते सुम्नीमहे।"** का पाठ करते हुए मुस्लिम बन्धुओं को सम्बोधित किया था। इस अवसर पर उन्होने कहा था कि हम शब्द में 'ह' और 'म' दो अक्षर हैं। 'ह' का अर्थ हिन्दू और 'म' का अर्थ मुसलमान है। सभी ने उनकी इस ऊहापूर्ण बात को पसन्द किया था। स्वामी जी पहले व अंतिम गैर मुस्लिम व्यक्ति थे जिन्हें जामा मस्जिद के मिम्बर से मुसलमानों को धार्मिक उपदेश देने का अवसर मिला। स्वामी जी ने देश की स्वतन्त्रता के लिये अनेक प्रकार से योगदान किया। स्वामी श्रद्धानन्द जी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के प्रधान भी रहे। उन्हीं के कार्यकाल में सन् १९२५ में मथुरा में ऋषि दयानन्द के जन्म की अर्ध शताब्दी मनाई गई थी। इस कार्यक्रम में लाखों लोग आये थे। व्यवस्था की दृष्टि से यह आयोजन अति सफल रहा था। इस अवसर पर प्रमुख आर्य प्रकाशक श्री गोविन्दराम जी ने सत्यार्थ प्रकाश का एक सस्ता संस्करण प्रकाशित किया था। यह अर्ध शताब्दी समारोह महात्मा नारायण स्वामी जी के नेतृत्व में आयोजित किया गया था। इसके बाद शायद ऐसा कार्यक्रम आर्यसमाज के इतिहास में नहीं हुआ। आज आर्यसमाज में स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा नारायण स्वामी जैसा कोई नेता नहीं है। आर्यों में यह भावनायें भी नहीं है जो उन दिनों के आर्यों में देखने को मिलती थी।

दिनांक २३ दिसम्बर १९२६ को रुग्ण अवस्था में एक मुस्लिम युवक अब्दुल रशीद ने स्वामी जी के दिल्ली स्थित निवास पर पहुंच कर धोखे से उन्हें कई गोलियां मारकर शहीद कर दिया। मनुष्य मर सकता है परन्तु सत्य नहीं। स्वामी श्रद्धानन्द जी आज हमारे दिल में जीवित है। आर्यसमाज को स्वामी श्रद्धानन्द जी का अनुकरण करना चाहिये। हम स्वामी जी को नमन और उन्हें अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

पता - १९६ चुक्खूवाला-२, देहरादून-२४८००१

"शरीर जलाने से स्वर्ग नहीं मिलता"

पुष्कर में चक्रांकित वैष्णव मत का खण्डन करते हुए स्वामी जी ने कहा कि विष्णु के चिह्न शंख-चक्रादि को तपा कर शरीर पर अंकित कराने से स्वर्ग नहीं मिलेगी। 'तप्ततनुः स्वर्गं गच्छति' की बात झूठी है सत्यादि व्रत, तप, नियम से शरीर को तपाना उचित है।

-महर्षि दयानन्द

आध्यात्मिक

मुमुक्षु व्यक्ति का जीवन .... ?

- स्वामी सत्यानन्द सरस्वती 'दर्शनाचार्य'

मोक्ष मार्गी व्यक्ति जो ईश्वर प्राप्ति अथवा नित्यानन्द प्राप्ति का लक्ष्य रखता है, उसे योगाभ्यास करते हुये योग विषयक अधिकाधिक जानकारी वेद, उपनिषद्, दर्शनादि से तथा योग के ज्ञाताओं से करते रहना चाहिए। योग मार्ग ही एक ऐसा मार्ग है, जो उक्त लक्ष्य को सिद्ध करवा सकता है। यह वर्तमान जीवन शैली से भिन्न एक विशिष्ट जीवन शैली से भिन्न एक विशिष्ट जीवन शैली है। लौकिक जीवन जीते हुये योगी नहीं बना जा सकता और योगी कभी भी लौकिक नहीं होता। दोनों शैलियाँ एक दूसरे से दिन व रात की तरह ही भिन्न है। योगाभ्यास करते हुये अभ्यासी को कभी भी किसी लौकिक व्यक्ति से चाहे वह कितना ही महान हो अपनी तुलना नहीं करनी चाहिये। यदि योगाभ्यासी लौकिकों से अपनी तुलना में लग गया, तो अनिष्ट हो जायेगा।

लौकिक व्यक्ति का उद्देश्य लोक ही होता है, वह प्राकृतिक पदार्थों को प्राप्त करना और उनका उपयोग करते हुये आनन्द से जीवन बिताने को ही जीवन मानता है। उससे भिन्न उसे कुछ भी दिखलायी नहीं देता, जबकि योगाभ्यासी का लक्ष्य सांसारिक सुखों की जगह ईश्वर प्राप्ति होता है। वह सदा ईश्वर के ही चिन्तन में डूबा रहता है, संसार को कदापि नहीं। जिसने अपना लक्ष्य योगी बनना बना लिया है, वह ईश्वर को कभी भी गौण नहीं रखता। कभी-कभी अज्ञानतावश या अभ्यास की कमी के कारण वह प्राकृतिक पदार्थों को प्राथमिकता दे भी देता तब भी ईश्वर को नहीं छोड़ता। पढ़ते-पढ़ते, सेवा कार्य करते, भोजन आदि सभी कार्य करते हुये ईश्वर से सम्बन्ध बनाये रखता है। क्योंकि ईश्वर से सम्बन्ध होने वाले लाभों से वह इतना प्रभावित हो जाता है कि वह उससे दूर होना ही नहीं चाहता। वह कभी भी अकेला नहीं होता, सतत् ईश्वर को अपने पास ही देखता है ठीक वैसे ही जैसे एक ही कक्ष में रहने वाले दो व्यक्ति अनेकों कार्य करते हुये अपने साथी की उपस्थिति का अनुभव करता रहता है।

जो व्यक्ति ईश्वर को सदा ही अपने समीप देखता है, वह कभी (१) पाप कर्म नहीं करता, (२) प्रदर्शन नहीं करता (३) विषयों में नहीं फंसता, (४) तृष्णाओं से दूर रहता है, (५) कोई दोष उसे नहीं छूते। इतना ही नहीं वह ईश्वर से बात करता रहता है और अपने दोष उसे सुनाता है तथा अच्छे गुणों की प्राप्ति की प्रार्थना उनसे करता रहता है। अपने जीवन में आये हुये दोषों का प्रायश्चित करता रहता है। ईश्वर से यह निरन्तर लगाव ही योग का बड़ा लक्षण है। जैसे लोक में भिखारी भीख मांगता है, वैसे ही योगी अपने दुर्गुणों को दूर करने और शुभ गुणों के समावेश की माँ करता ही रहता है। वह यह सोचता है कि ईश्वर से हट जाने पर न मालूम मैं कौन सा अनिष्ट कर दूँ। क्योंकि जब व्यक्ति ईश्वर से विमुख हुआ रहता है तो दिन भर में हजारों पाप कर्म करता है। उस समय हम उन पाप कर्मों को नहीं समझ पाते, आगे चलकर उनका पता चलता है।

पढ़ना भी है, उपकार के कार्य भी करने हैं, जीवनयापन के सब कार्य करते हुये भी ईश्वर को प्रधान रखना होगा। योगाभ्यासी ईश्वर को गौण और लौकिक कार्यों को प्रधानता नहीं दे सकता। योगाभ्यासी कोई असत्य क्रिया तो क्या, मन में असत्य का विचार भी नहीं करता चाहे वह खाली ही बैठा रहे। ईश्वर की ऐसी अनुभूति सतत बनाये रखते हुये कुछ समय तक लगभग छः माह या एक वर्ष तक बिना किसी बाह्य क्रिया के बिना पढ़े या बिना किसी से सम्बन्ध विशेष रखकर प्रयोग करना चाहिए। फिर इस ईश्वर समर्पण क्रिया के परिपक्व हो जाने पर जब कार्य करने लगेगा तो जो कार्य दस वर्ष में होने वाला था वह दो वर्ष में ही सफलतापूर्वक कर सकता है। ईश्वर से सतत सम्बन्ध बनाये रहना और संसार को गौण बनाये रखना सरल कार्य नहीं है। पूर्व संस्कारों को बाँधकर रखना, विषयों को उठने ही नहीं देना, मन की चंचलता को रोक रखना, सहनशीलता को बढ़ाना आदि साधनों से ही सफलता मिलती है। फिर तो साधक निर्द्वन्द, स्वतन्त्र, निर्भय और तृप्त हो जाती है।

चित्त वृत्ति निरोध का अर्थ प्रायः व्यक्ति यह समझता है कि उपासना काल में वृत्तियों को रोकना चाहिए। यह ठीक है करना भी चाहिए, परन्तु जब दुःख निवृत्ति और सुख प्राप्ति निरन्तर चाहता हो और यही उसका साध्य की सिद्धि में साधन भी सदा निरन्तर साथ ही रखना पड़ेगा और उसका सर्वोत्तम साधन योग को बतलाया है। इससे यह सिद्ध हुआ कि व्यक्ति जीवन में और उसके पश्चात् भी दुःख रहित शुद्ध सुख एवं शान्ति चाहता है तो उसका एकमात्र साधन योग है, जो आठ अङ्गों से युक्त है, उसे भी निरन्तर अपनाना पड़ेगा। योग के किसी भी भाग को एक क्षण के लिये भी नहीं छोड़ा जा सकता। वृत्तियों का निरोध करते हुये, ईश्वर प्रणीधान से युक्त व्यवहार काल में सूक्ष्मता से यम-नियमों का आचरण करते हुये व्यवहार करने से ही सार्वभौम महाव्रत पालन हो सकता है। इसके विपरीत वृत्ति सारूप्यता है जो दुःख का कारण है।

मनुष्य जीवन का चरम लक्ष्य दुःखों से निवृत्ति है अर्थात् मोक्ष प्राप्ति का योग ही एकमात्र साधन है। इस जन्म-मरण के क्रम से बचने के अतिरिक्त चालू जीवन में भी योग का बहुत बड़ा महत्व है। विद्यार्थी हो या वैज्ञानिक, वकील हो या व्यापारी, सैनिक हो या शासक सभी कार्यक्षेत्रों में योग अद्वितीय साधन है। योग करने से मन एवं इन्द्रियों पर संयम हो जाता है। बुद्धि का विकास, स्मृति का तीव्र होना जैसे लाभ मिलते है। राग, द्वेष, तनाव, काम, क्रोध आदि का विनाश हो जाता है। विश्व बन्धुत्व, प्रेम, सहिष्णुता, परोपकार, दया, न्याय, त्याग की भावना जागृत हो जाती है। शारीरिक एवं मानसिक दुःखों को सहने की शक्ति बढ़ती है। लोकैषणा, पुत्रैषणा तथा वित्तैषणा का नाश हो जाता है। पर्वत जैसी भारी मुसीबत (दुःख) को भी वह सरलता से सहन कर लेता है। जिस क्रिया को करने से इतनी महान उपलब्धियाँ हासिल होती हो, उसको करने के लिए पूर्ण पुरुषार्थ एवं अत्यन्त श्रद्धापूर्वक योग के साधन शुद्ध ज्ञान, शुद्ध कर्म और शुद्ध उपासना को अपना लेना चाहिए। ऐसा करने के लिये वर्ण आश्रम व्यवस्था जो शास्त्रों में बतलायी गयी है उसे अपनाना होगा।

जीवन के पहले भाग में अर्थात् ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्या अध्ययन कर ज्ञान विज्ञान को बढ़ाकर भावी जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये अपने आप को सुदृढ़ बना लेना चाहिए। दूसरे भाग में अर्थात् गृहस्थ प्रवेश करें, पर यह आवश्यक नहीं है कि व्यक्ति गृहस्थ में जाये ही। गृहस्थ में वे जावें जो रोगी हैं अर्थात् वासना रूपी रोग से नहीं बच सकें है। परन्तु जो गृहस्थ जीवन धारण करता है उसके लिये वानप्रस्थ आश्रम अपनाना आवश्यक है। जो गृहस्थ रूपी कुर्सी से ही चिपका रहेगा वह निश्चय ही दुःखों को प्राप्त करेगा, चाहे वह चक्रवर्ती राज्य का स्वामी ही क्यों न हों। फिर वानप्रस्थ आश्रम में सेवा, साधना और स्वाध्याय करता हुआ संन्यास की तैयारी करें। इस प्रकार आश्रम पद्धति अपनाने से जीवन जीते हुये, योग विद्या को मुख्य साधन रख कर वह अपने जीवन को सफल बना सकता है, इसके अलावा दूसरा कोई अन्य विकल्प नहीं है।

पता - राजस्थान

उत्सवीय सूचना

ईश्वर की असीम अनुकम्पा से, देश के आर्यों में संस्तुत, आदर्शों का अनुगामी, गिरि उपवन में विद्यमान तीर्थस्थल, यज्ञ द्रव्यों से सुरभित गुरुकुल हरिपुर का दशम वार्षिक महोत्सव **'दिशा पर्व'** वि. सं. २०-७६ पौष शुक्ल द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी तदनुसार **२८,२९ व ३० दिसम्बर २०१९ शनि, रवि, सोमवार** को अनेक ऐतिहासिक कार्यक्रमों के साथ देश के शीर्ष दिव्य विभूतियों के पावन सान्निध्य में मनाने जा रहे हैं, जिसमें हम आप सब सात्विक एक-एक नर-नारियों की उपस्थिति चाहते हैं। अतः आप सभी भाई बहनों से निवेदन है, कार्यक्रम की महत्ता, गम्भीरता, आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए गुरुकुलीय उत्सवीय अवसर पर अवश्य पधारें। उत्सव व पर्व लोगों के परस्पर मेल का स्थल है तथा यह मेलभाव देश की अखण्डता, अस्मिता एवं गुरुकुल संस्कृति की रक्षा आदि को बनाये रखने के लिये आवश्यक है।

निवेदक: आचार्य, गुरुकुल हरिपुर, जुनानी (ओड़िसा)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आर्यसमाज की प्रासंगिकता

ज्वलन्त समस्या

- ओम प्रकाश आर्य

हम वैज्ञानिक युग में जी रहे हैं। विज्ञान का सिद्धान्त सत्य पर आधारित होता है। उसमें लेशमात्र भी अंधविश्वास, असत्य, मिथ्या बातें नहीं होती है, किन्तु वर्तमान समय में अंधविश्वासों, मिथ्या बातों, ढोंग-पाखंडों की अनेकशः घटनाएँ पढ़ने-सुनने व देखने में आती है। इन्हें देखकर प्रबल उत्कण्ठा होती है कि तमाम धार्मिक संस्थाओं के बावजूद भी अंधविश्वास किस प्रकार अपनी जड़ें जमाए हुए हैं। ऐसे समय में आर्यसमाज के खण्डन-मण्डन की महती आवश्यकता है। कुछ बातें, जो आर्यसमाज के लिए सर्वथा प्रासंगिक है, उनका जिक्र कर रहा हूँ-

१. राशिफल का भ्रम - आजकल प्रायः हिन्दी-अंग्रेजी सभी समाचार पत्रों में राशिफल का उल्लेख रहता है। प्रतिदिन निकलने वाले उन राशिफलों को लोग पढ़ते हैं। उन बारह राशियों को पढ़कर लोग अनायास ही भय-भ्रांतियों और शंकाओं के शिकार होते हैं। चाहे वे बहुत अधिक पढ़े-लिखे लोग हों, चाहे कम पढ़े-लिखे। निश्चय ही उन्हें पढ़कर लोगों का मन शंकालु होता है। शंका अनेक मनोरोगों को जन्म देती है। क्या छः अरब स्त्री-पुरुषों का भाग्य बारह प्रकार का है ? या बारह प्रकार के लोग ही इस धरती पर है जिनका विचार, आर्थिक स्थिति, बुद्धि, ज्ञान, शिक्षा एक जैसे हैं ? जब कोई दुर्घटना होती है तब एक ही राशिफलों की मृत्यु क्यों नहीं होती ? विभिन्न राशिवाले क्यों उस दुर्घटना के शिकार हो जाते हैं ? इन राशियों का पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों के ऊपर प्रभाव क्यों नहीं पड़ता ? सिवाय आर्यसमाज के और कोई भी संस्था इसका खंडन-मंडन नहीं करती।

२. जन्मकुण्डली की विभीषिका - यह एक ऐसी विभीषिका है जिसे देखकर लगता ही नहीं कि आज का विज्ञान चंद्रलोक या मंगल ग्रह पर पहुंच चुका है। कालेज के प्रोफेसर, डॉक्टर, इंजीनियर को जब उनको लड़का-लड़की के विवाह में जन्मकुण्डली का मिलान करते हुए देखा जाता है तब ऐसा प्रतीत होता है जैसे शिक्षा और सारा ज्ञान-विज्ञान निरर्थक है। डिग्रीधारी व्यक्ति भी मुहूर्त निकलवाकर रात में १-२-३ बजे लड़के या लड़की का विवाह करवाता है। घर में प्रवेश करते समय मुहूर्त का सहारा लेता है। अच्छे बुरे दिन को मानकर चलता है। योग्य लड़का या लड़की का विवाह, अयोग्य लड़की या लड़के से कर देता है जिसका दुष्परिणाम वह सारा जीवन देखता है, फिर भी जन्मकुण्डली पर से उसका विश्वास नहीं उठता। यह सब क्या है ? अच्छे से अच्छे रिश्ते जन्मकुण्डली के चक्कर में निष्फल हो जाते हैं। कालेज शिक्षित व्यक्ति के हाथ में जन्मकुण्डली देखकर विज्ञान के यान पर बैठा हुआ मनुष्य अशिक्षित सा प्रतीत होता है ! आश्चर्य तो तब होता है जब वह मंगली या मंगला के नाम पर चक्कर काटता है और भटकते-भटकते पुत्र या पुत्री के विवाह की आयु को समाप्त कर देता है। इस पाखण्ड का खंडन आर्यसमाज ही करता है और कोई नहीं।

३. तंत्र-मंत्र के जाल का विस्तार - अभी हाल ही में एक समाचार पत्र में यह पढ़ने को मिला कि मध्यप्रदेश में एक वैज्ञानिक दूसरे वैज्ञानिक की बलि देने की तैयारी कर रहा था। ऐसा वह किसी तांत्रिक के कहे अनुसार कर रहा था। यह तो गनीमत हुआ कि उसकी जान बच गई क्योंकि वह जोर से चिल्लाया जिससे और लोग वहां पर आ गए। जब एक वैज्ञानिक तंत्र-मंत्र के जाल में फँस सकता है तब अन्य लोगों का क्या हाल होगा ? यह एक चिन्तन का विषय है। ऐसे न जाने कितनी जानें तंत्र-मंत्र के चक्कर में चली जाती हैं। इन्हें देखकर लगता ही नहीं कि हम विज्ञान के युग में ही जी रहे हैं या हम स्कूल, कालेजों में शिक्षा प्राप्त किए हुए हैं। प्रति सप्ताह समाचार पत्रों में तंत्र-मंत्र-यंत्र की महत्ता प्रतिपादित करने वाले लेख प्रकाशित होते हैं। न जाने कितने लोग उनको पढ़ते होंगे और क्या शिक्षा

प्राप्त करते होंगे ? इतना ही नहीं पेड़ लगाने का मुहूर्त, राखी बांधने का मुहुर्त, खेत जोतने का मुहूर्त, बिदाई का मुहूर्त, विवाह का मुहूर्त, रावण का पुतला जलाने का मुहूर्त, घर में प्रवेश करने का मुहूर्त, होलिका जलाने का मुहूर्त, घर से निकालने का मुहूर्त, नींव रखने का मुहूर्त - जाने क्या-क्या मूहुर्त निकाले जाते है। मुहूर्तवादियों की मुहूर्तवादिता पर सारी वैज्ञानिक प्रगति निरर्थक सिद्ध होने लगती है। ऐसे समय में आर्यसमाज के विचारों के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता और बढ़ जाती है।

४. फलित ज्योतिष का फलता-फूलता उद्यान - एक तरफ हम चन्द्रमा पर पानी की खोज कर रहे हैं और दूसरी तरफ फलित ज्योतिष के उद्यान में आंखों में आक के दूध डाल रहे हैं। हमने अपना सारा जीवन फलित ज्योतिष को समर्पित कर दिया है। बिना इसकी आज्ञा के हम कोई कार्य नहीं करते। सारी उन्नति या अवनति इसी के ऊपर निर्भर हैं। ज्योतिष की दुकानें देखी जा सकती है। अब तो इसने कम्प्यूटर में भी अपना स्थान बना लिया है। जिसको कम्प्यूटर की जानकारी है वह अपना भविष्य स्वयं जानने का प्रयत्न करता है। यदि आप फलित ज्योतिष को मिथ्या साबित करें तो लोगों को आपकी बात पसन्द नहीं आएगी। न ही वे आपकी बातों को मानेंगे। फलित ज्योतिष की लुभावनी बातें बड़े-बड़े लोगों को आकृष्ट कर रही है। जब तक हम इसकी धार पर चढ़ नहीं जाते तब तक हमें संतुष्टि नहीं मिलता। हम अच्छी-बुरी बात को फलित-ज्योतिष से जोड़कर रखते हैं। जीवन में सारे मांगलिक-अमांगलिक कार्य फलित ज्योतिष ने अपने हाथों में ले रखे हैं। डॉक्टर, इंजीनियर, प्रोफेसर, व्यापारी, नेता, अभिनेता सबके हाथ इसके सामने जुड़ जाते हैं। इस मिथ्या प्रवंचना का पर्दाफाश करने वाला केवल आर्यसमाज है। आर्यसमाज के वे दीवाने जिन्होंने अपने पुत्र-पुत्रियों का विवाह जाति-पांति तोड़कर किया बिना किसी लग्न-मुहूर्त के किया, बिना किसी आडम्बर के किया वे केवल साहसी और सिद्धान्त के पक्के रहे होंगे। आज स्थिति यह है कि सत्य बात को सुनना ही पसंद नहीं करता। भले ही वह फलित ज्योतिष के बताए अनुसार झूठी हो। फलित ज्योतिष की झूठी बातें लोगों के दिलो-दिमाग में घर कर जाती है। जो मन से निकाले नहीं निकलतीं। ऐसे समय में आर्यसमाज की आवश्यकता और बढ़ जाती है कि वह मिथ्या बातों का खंडन करें।

५. नव-नव मत-पंथों का उद्‌भव - विज्ञान के जितने ही संचार के साधन उपलब्ध कराए हैं, दूरदर्शन की जितनी ही आंखे दिव्य हुई है, उतने ही नव-नव, मत-पंथों का उद्‌भव और विकास हो रहा है। यदि उन मत-पंथों को देखा जाए तो स्पष्ट होगा कि उनके द्वारा लोगों का विचार भेद बढ़ा है। एक मत-पंथवाला दूसरे मत-पंथ की बातों को पसंद नहीं करता। इससे धार्मिक सत्यता नष्ट होती है एवं मिथ्या बातों को बढ़ावा मिलता है। बहुत सी अवैज्ञानिक बातों का प्रचार होता है जिसको मिटाना दुःसाहस कार्य है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जिस वैज्ञानिक तरीके से यज्ञ-हवन की विधि बतया है उसे न करके अन्य मतावलम्बी अपने तरीके से हवन करते हैं जिसमें घी सामग्री सब अनुपयुक्त ढंग से प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार संध्या की विधि, विवाह की विधि एवं अन्य कर्मकाण्ड की विधि अलग-अलग बना डाले हैं। इन मत-पंथों के अनुपोषक पढ़े-लिखे हर प्रकार के लोग हो जाते हैं। सत्यता तो यह है कि इनका खंडन-मंडन सिवाय आर्यसमाज के और कोई नहीं करता।

६. बदली हुई अवैज्ञानिक जीवन-शैली - आज पाश्चात्य सभ्यता के कारण लोगों की जीवन-शैली बदलती जा रही है। परिणामस्वरूप लोग अनेक आधि-व्याधि के शिकार हो रहे हैं। तनाव, अनिद्रा, मोटापा, रक्तचाप, मधुमेह, एड्स, हृदयघात तथा न जाने कितने रोग अवैज्ञानिक जीवन-शैली अपनाने के कारण हैं। खड़े-खड़े खाना, बिना हाथ-पैर धोए खाना, डिब्बा बंद खाद्य पदार्थों का सेवन, बिस्किट, नमकीन, चाय, कॉफी, शीतल पेय, कुलफी जैसी खाद्य सामग्री अनेक रोगोंका कारण है। आधुनिकता के नाम पर हम अपने स्वास्थ्य और शांति सबको तिलांजलि देते हुए चले जा रहे हैं। विज्ञान के युग में जीते हुए अवैज्ञानिक जीवन-शैली को सहर्ष अपनाकर हम अपने को मुसीबत में डाल रहे हैं। ठंड के मौसम में ठंडी चीजें खाना, गर्मी के मौसम में गरम चीजें खाना बीमारियों को बुलाना है। प्रकृति से दूर भागना, अप्राकृतिक रहन-सहन नई-नई बीमारियों

को पालना है। ऐसे समय में आर्यसमाज ही लोगों को त्राण दे सकता है। इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं- स्वामी रामदेव जो योग के माध्यम से पूरी दुनियां को स्वास्थ्य प्रदान कर रहे हैं। इसी प्रकार आर्यसमाज की हर विचारधारा लोगो को सुख, शांति और आनन्द प्रदान कर सकती है। सत्य बात को कहने वाला और उसे अपनाने वाला आर्यसमाज है। आधुनिक जीवन शैली के चलते हमने अपने सारे वैज्ञानिक पर्व-त्यौहारों को विकृत कर डाला। होली, दीपावली, श्रावणी उपाकर्म, विजयादशमी, श्रीराम नवमी, श्रीकृष्ण जन्माष्टमी सबको विकृत कर डाला। इन पर्वों पर पटाखे छोड़कर, आतिशबाजियां करके पर्यावरण की कितनी क्षति पहुंचाते हैं जिसकी कल्पना नहीं कर सकते। होली हुड़दंग का पर्व हो गई है। हमने वैज्ञानिक पर्वों को आधुनिकता के रंग में रंगकर उन्हें अवैज्ञानिक बना डाला। आर्यसमाज ही इनकी सत्यता पर प्रकाश डालता है। आज आर्यसमाज के विचारों के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता पहले की अपेक्षा और कई गुना बढ़ गई है। कारण आज बिगाड़ने वाले साधन अधिक हैं और बनाने वाले कम। हमें वैदिक मान्यताओं को पुरजोर ढंग से प्रचारित करना होगा। इस वैज्ञानिक युग में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार की सख्त आवश्यकता है। ●

पता - आर्यसमाज रावतभाठा, वाया-कोटा (राज.) ३२३३०५

रोटी

भूखे इन्सान के लिए रोटी का स्थान धर्म से कई गुना अधिक महत्व का होता है। ठीक इसी तरह रोटी कानून से भी अधिक महत्व की होती है, जिस पर जान की बाजी लग जाती है। वही रोटी भूखे आदमी को नक्सलवाद या आतंकवाद के रास्ते तक ले जाती है।

"पहले मुझको गोली मारो"

ब्रिटिश तंत्र की तानाशाही के विरुद्ध आन्दोलन।
का विशाल जन जुलूस निकाला स्वयं किया संचालन॥
अहा! चांदनी चौक दृश्य वह नयनों में छा जाता।
जुलूस रोकता सैनिक दल, संगीनों को चमकाता॥
और सिंह गर्जना वह, कानों में है गहराती।
पहले मुझको गोली मारो, खोल खड़ा था छाती॥
वह निर्भीक, सुदृढ़ जननेता श्रद्धानन्द हमारा।
त्याग, समर्पण, जनसेवा हित जिसने तन था धारा॥
ओजपूर्ण मुखमण्डल, गर्जन का प्रभाव गहराया।
जनता के तन, मन में अद्भुत अमित जोश भर आया॥
संन्यासी का प्रखर तेज, तप देख झुकी संगीने।
रायफलों की नलियों में मुख जमीं ओर कर दी ने॥
रुद्ध मार्ग खुल गया, जुलूस ने आगे कदम बढ़ाया।
वृहद भीड़ ने आर्य तुम्हारे जय जयकार लगाये॥
धन्य धन्य संकल्प, सुदृढ़ साहस नेतृत्व तुम्हारा।
मन श्रद्धानन्दी चरणों में करता नमन हमारा॥
अहा! दृश्य वह जब भी मेरे नयनों में घिर जाता।
मन मेरा श्रद्धा से श्रद्धानन्द के प्रति भर जाता॥

- दयाशंकर गोयल, १५५४-डी, सुदामा नगर, इन्दौर (म.प्र.)

प्रेरणात्मक प्रणम्य-धर्मनिष्ठा

लेखक : सी.ए. राजकुमार

आर्यसमाज की सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक विचारधारा का आज पहले से भी अधिक सार्थकता के साथ प्रचार हो सकता है मगर यदि हमारे समस्त अधिकारी एवं विद्वान् अपनी समस्त एषणाओं को त्यागकर मिशनरी भावना से प्रचार करें।

आर्यसमाज के स्वर्ण युग का कारण यह था कि उस समय हमारे पास पंडित गुरुदत्त, पंडित लेखराम, स्वामी दर्शनानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द आदि महर्षि के अनेक दीवानें थे, जिन्होने अपना तन, मन और धन अपने मिशन के लिए समर्पित कर दिया। उन्होंने पुत्रैषणा, वित्तेषणा और लोकेषणा से ऊपर उठकर निष्काम-भाव से कार्य किया। आज भी उसी भावना से कार्य करने की आवश्यकता है। प्रेरणा के रुप में मैं पूज्य महात्मा चैतन्यमुनि जी तथा मां सत्यप्रियायति जी का उदाहरण देना चाहता हूँ, जिनमें आज भी वही मिशनरी भावना हमें दिखाई देती है। उनका पूरा जीवन ही मानों देव दयानन्द जी के लिए समर्पित रहा है। हमने उन्हें बहुत ही समीप से देखा-परखा है, वे पूर्णतया एषणारहित, त्यागी, समर्पित, विनम्र, निरहंकारी और शालीन है। अपनी अद्‌भुत शैली से वे किसी को भी एक बैठक में वैदिक धर्मी बनाने की क्षमता रखते हैं। हम लोग पूज्य महात्मा जी की कुटिया में बैठे थे तो हमारे आग्रह पर उन्होंने कुछ प्रसंग सुनाए जो उन्होने अपनी आत्मकथा 'पुल पर जीवन' में भी लिखे हैं। विभिन्न प्रान्तीय सभाओं द्वारा आर्यसमाज स्थापना दिवस के शताब्दी कार्यक्रम धूमधाम से मनाए जा रहे थे। ऐसा ही एक आयोजन हिमाचल आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से भी शिमला में मनाया गया था। उस समय आचार्य चैतन्यमुनि जी सभा के उपमंत्री थे। उन्हें शताब्दी समारोह में आने वाले लोगों की आवास व्यवस्था का कार्यभार सौंपा गया था। इस कार्य को उन्होने कितनी निष्ठा और लगन के साथ किया होगा इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि एक दिन सायंकाल लगभग साढ़े आठ बजे ब्रह्मचारी रामप्रकाश जी ने उनसे पूछा कि आपने रात्रि का भोजन कर लिया या नहीं ? उनके इस प्रश्न पर चैतन्यमुनि जी को स्मरण आया कि रात्रिकालीन भोजन की बात तो दूर रही उन्होने तो प्रातःकाल से अब तक कुछ भी मुंह में नहीं डाला है। उन्होने आर्यसमाज सुन्दरनगर तथा वर्षों आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री, वरिष्ठ उपप्रधान और कार्यकारी प्रधान के रुप में निष्कामभाव से की गई सेवा के बारे में भी चर्चा की। उन्होने बहुत ही भावविभोर होकर कहा कि किस प्रकार उन्होंने तथा उनके समूचे परिवार ने सभा के लिए बहुत ही कठिन परिस्थितियों में समर्पित भाव से कार्य किया है तथा सभा की पत्रिका **'आर्यवन्दना'** को अपने बच्चों की तरह पाला था... उन्होने जम्मू कश्मीर के बार्डर क्षेत्र तथा गुजरात, महाराष्ट्र आदि अनेक प्रान्तों में किन कठिन परिस्थितियों में वेद प्रचार किया है, हम सुनकर आश्चर्यचकित से रह गए, वह अपने आप में अनुपम एवं अनुकरणीय है ...।

उन्होंने बताया कि सन् १९९६ में आर्यसमाज भरवाई के ८१वें वार्षिक उत्सव में हम २४से २९ जुलाई तक रहे। हमारी ठहरने की व्यवस्था आर्यसमाज में ही की गई थी। मगर बरसात के कारण दरियां पानी से भीगी थी तथा बिछाने के लिए तलाई, ओढ़ने के लिए कोई चद्दर या तकिया आदि कुछ भी नहीं था। हम जैसे-कैसे सो तो गए मगर नीचे से गीलापन इतना कि हमारे पहने हुए कपड़े भी गीले हो गए, नींद तो कहां आनी थी। मंच पर से एक सूखी दरी बिछाई और आसनों को तकिया बनाया मगर तभी तितलियों के आकार के कुछ बड़े-बड़े जीव आकर हमारे चेहरों पर मंडराने लगे। जैसे-तैसे रात व्यतीत हुई। प्रातःकाल शौचादि के लिए खुले में जाना था मगर साथ पानी ले जाने के लिए कोई भी पात्र आदि नहीं था। सोचा चलो अब जाना तो है ही पानी बाद में ले लेंगे। ज्यों ही सड़क के नीचली ओर उतरने लगे तो रेतीली भूमि पर से दोनों के ही पांव फिसले और संभलने का कोई मौका न मिलने के कारण बहुत नीचे तक पहुंच गए। वहां से सड़क तक पहुंचना और भी अधिक कठिन हुआ, क्योंकि चौपाए होकर जितना ऊपर चढ़ते थे, रेतली भूमि पर फिसलकर उतना ही नीचे पहुंच जाते थे। जैसे-तैसे सड़क तक पहुंचे और पीने के लिए एक सुराही में रखे गए जल से

आर्यसमाज भवन के नीचली ओर जाकर पानी का प्रयोग किया। अगले दिन बिस्तर आदि की व्यवस्था हो सकी। उसके बाद एक बार पुनः जब गए तो भी ठहरने की व्यवस्था ठीक न होने के कारण मुझे बहुत तेज बुखार हो गया। बुखार अगले दिन बढ़ गया, मगर उसी स्थिति में उस दिन तीन प्रवचन दिए, जिससे बुखार और अधिक तेज हो गया। उधर सत्यप्रिया जी के दांत में असहनीय दर्द हो गया मगर वे भी भजन गाती रहीं। कहीं कार्यक्रम खराब न हो जाए इस डर से हमने पी. डब्ल्यू.डी. के विश्राम गृह में अपने ठहरने की व्यवस्था की तथा इसका व्यय-भार आर्यसमाज पर नहीं डाला (यह पूर्ण सत्य है कि पूज्य महात्मा जी ने आज तक किसी से कुछ नहीं मांगा है)।

उन्होंने एक और प्रसंग इस प्रकार सुनाया कि पंचकूला के आर्यसमाज सैक्टर-९ में सन् १९९७ में १० से १६ नवंबर तक हमारा कार्यक्रम हुआ। इस कार्यक्रम में आचार्य रामप्रसाद वेदालंकारजी तथा आचार्य विश्वदेव जी आदि अनेक अन्य विद्वान् भी पधारे हुए थे। आचार्य रामप्रसाद जी हमसे बहुत ही अधिक प्रेम करते थे। हमने देखा कि न तो लोग ही उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखते हैं और न वे स्वयं ही ... एक दिन ठण्डी पुरियां खाने लगे तो सत्यप्रियाजी ने उनके खानपान तथा स्वास्थ्य का ध्यान रखा। आचार्य रामप्रसाद जी एक दिन मेरे प्रवचन के बाद बोलने के लिए आए तो बहुत देर तक हमारी प्रशंसा करते रहे...उन्होंने यह भी कहा कि चैतन्यजी तो अभी पूरी तरह चले नहीं हैं जब चलेंगे तो हम लोगों से तो बहुत आगे निकल जाऐंगे... एक दिन रात्रि को उनके साथ हम अकेले में बैठकर रात के लगभग २ बजे तक बातचीत करते रहे थे.... एक दिन सभी विद्वान् भी उनके कमरे में देर रात तक बैठे बातचीत कर रहे थे तो उन्होंने कहा कि सभी अपनी-अपनी प्रचार यात्राओं में आए कष्टों के अनुभव बताएं....देखते हैं कौन कष्ट सहने में प्रथम आता है, आचार्य विश्वदेव जी ने बताया कि एक बार वे किसी कार्यक्रम पर जा रहे थे तो मार्ग में बहुत बड़े-बड़े ओले गिरने लगे.. उनके सिर पर ओलों की चोट पड़ने लगी, उन्होंने अटैची अपने सिर पर रखी और ओलों से अपना बचाव करते हुए कार्यक्रम पर पहुंचे। आचार्य रामप्रसाद जी ने बहुत ही हंसते-हंसते हुए सुनाया कि एक बार उन्हें ऐसे बिस्तर पर सुला दिया गया था जिसकी रजाई में छोटे-छोटे चूहों के बच्चे थे। थोड़ी-थोड़ी देर के बाद चूहे उछल-उछल कर बाहर निकलते रहते थे। उन्होंने एक अन्य घटना सुनाते हुए कहा कि एक कार्यक्रम पर जाते हुए उन्हें अचानक एक स्थान पर रात पड़ गई और उन्हें रात किसी पुराने खण्डरनुमा स्कूल में बितानी पड़ी, मैंने कहा कि हमारे साथ तो इससे भी बहुत बड़ी-बड़ी बीसियों ही घटनाएँ घटी हैं। उनमें से हमने केवल दो ही घटनाएँ (लेख लम्बा हो जायेगा, अतः वे घटनाएँ नहीं दे पा रहे हैं) सुनाई तो आचार्य रामप्रसाद जी ने एकदम गंभीर होकर कहा कि चैतन्य जी आप प्रथम आ गए... अरे इतने कष्ट....।

२००८ में आर्यसमाज ३२-डी, चंडीगढ़ का २५ मई से १ जून तक कार्यक्रम था मगर मुझे कुछ दिनों से ज्वर था और २१मई को ज्वर ने भयंकर रुप धारण कर लिया। अपने पारिवारिक डा. रमेश जी को दिखाया तो उन्होंने खून आदि टेस्ट करने के बाद कहा कि आपको तो भयंकर रुप से टाईफाईड है, अतः आप कार्यक्रम पर बिल्कुल न जाएं, आपका जीवन बहुत कीमती है। उधर श्री प्रेमजी को चण्डीगढ़ फोन करके स्थिति बताई तो उन्होंने कहा कि हमारा कार्यक्रम खराब हो जाएगा। मुझे स्वामी श्रद्धानन्द, लेखराम, गुरुदत्त, स्वामी दर्शनानन्द आदि को स्मरण हो आया, जिन्होंने विपरीत से विपरीत परिस्थितियों में भी वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए स्वयं को आहुत कर दिया। बहुत विचार करने के बाद अन्ततः जाने का ही निर्णय लिया। स्वयं कार चलाकर हम चण्डीगढ़ के लिए २४ मई को रवाना हो गए मगर परीक्षा कड़ी थी, मार्ग में बनेर की चढ़ाई पर एकान्त जंगल में कार का टायर पंचर हो गया। हमें स्वयं टायर बदलना आता नहीं था, यदि जीप को वहीं जंगल में अकेला छोड़कर कुछ दूर पैदल चलकर और फिर एक ट्रक पर बैठकर आगे जाकर बहुत अनुनय-विनय करके तथा अधिक पैसे देकर एक मैकेनिक को लाया मगर उसने पूरा काम भी नहीं किया... जैसे-तैसे आगे बढ़े ही थे कि रास्ते में ट्रैफिक पुलिस का सामना हो गया। अतः हमारा चालान कर दिया गया। जल्दी-जल्दी में तथा परेशानी के कारण हम बैल्ट लगाना भूल गए थे। अतः हमारा चालान कर दिया गया। इस सबका सबसे बड़ा कुपरिणाम यह हुआ कि हमें चण्डीगढ़ पहुंचने में बहुत

देर हो गई तथा उस शहर की भूल-भूलैया में दिन को कार चलाना कठिन हो जाता है और रात्रि को कार चलाना तो मेरे लिये बहुत कठिन हो जाता। चण्डीगढ़ पहुंचते पहुंचते हमें बहुत रात हो गई। फिर भी पहुंचना तो था ही सो जैसे-तैसे आर्यसमाज पहुंच गए। हमारे पहुंचने पर सभी अधिकारी आदि बहुत प्रसन्न हुए। यज्ञ का ब्रह्मा भी मैं ही था।

मई २५ को प्रातः यज्ञ तथा प्रवचनादि ठीक प्रकार से निभ गया मगर प्रवचन समाप्त होते ही मेरा शरीर इतनी बुरी तरह से कांपने लगा कि मंच पर बैठना असंभव हो गया। मैं उठकर सीढ़ियों की रैलिंग का सहारा लेते-लेते कमरे तक बहुत ही कठिनाई से पहुंच पाया। कमरे में पहुंचने पर शरीर और भी अधिक जोर-जोर से कांपने लगा। इतने में सत्यप्रियायति जी, सेवक कश्मीरजी तथा कुछ अन्य अधिकारी भी मेरे कमरे में आ गए। मेरा शरीर बहुत ही बुरी तरह से कांप रहा था। मैं डाक्टर रमेश को फोन करने लगा तो मेरे बहुत बुरी तरह से कांपते हुए हाथ से मोबाइल भी नीचे गिर गया। स्थिति बड़ी विकट थी। सत्यप्रियाजी ने डा. रमेश जी से बात की तो उन्होंने फोन पर ही कुछ दिशा-निर्देश दिए और तद्नुसार उपचार करके अस्थाई रुप से मैं कुछ स्वस्थ हो गया मगर जब रात्रि के प्रवचन के बाद भी स्थिति वैसी ही हो गई तो सभी के लिए बहुत चिन्ता का विषय हो गया। मुझे चिन्ता यही थी कि दवाईयां बताई जो डा. रमेश जी ने बताई थी। उन्होंने यही कहा कि आपको ऐसी स्थिति में कार्यक्रम पर नहीं आना चाहिए था, आपके शरीर की स्थिति बिल्कुल भी ठीक नहीं है।

ईश्वर की कृपा से जैसे-कैसे दवाईयों के सेवनादि के आधार पर कार्यक्रम ठीक प्रकार से सम्पन्न हो गया, तो मैने परमात्मा का बहुत धन्यवाद किया तथा सभी अधिकारी भी प्रसन्न हुए एवं ऐसी स्थिति में भी कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु हमारी प्रशंसादि करने लगे। हमारे साथ ऐसी स्थितियां पहले भी उपस्थित हुई थीं, मगर हमने वेदप्रचार को प्रमुखता देते हुए कभी अपने हित-अहित की चिन्ता नहीं की। उसके बाद ४ से १५ जून तक मोगा में हमारे संचालन में कन्याओं का वैदिक चेतना शिविर था। सुन्दरनगर आकर डॉ. रमेश जी के पास चेक कराने गया तो उन्होंने कहा कि मैं आपको ऐसी स्थिति में सुन्दरनगर से बाहर जाने की बिल्कुल अनुमति नहीं दे सकता। आपको पूर्ण विश्राम करना चाहिए। बात यहां भी कार्यक्रम निभाने की थी। सोचा यदि मैं न गया तो शिविर का क्या होगा ? बहिन इन्दुजी भी दूरभा, पर बार-बार यही आग्रह कर रही थी। डॉ. रमेश जी को यह आश्वासन देकर मैं स्वयं कार नहीं चलाऊंगा तथा वहां पर वे लोग मेरी देखभाल कर लेंगे आप चिन्ता न करें। दवाईयां लेकर हम लोग लगभग बारह बजे मोगा के लिए निकल पड़े। कार चलाने के लिए अनुरागजी को साथ ले लिया। मैं कार की पिछली सीट पर लेट गया और मार्ग में दवाईयों का सेवन करते-करते हम मोगा पहुंचे तो बहिन इन्दुजी एवं श्री केवलकृष्ण जी बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगा कि यदि आप न आते तो हमारे लिए बहुत कठिनाई हो जानी थी। हालांकि वहां तीन सत्रों में प्रवचनादि करने होते थे मगर ठीक खान-पान तथा नियमित दवाईयों का सेवन करते हुए कार्यक्रम ठीक प्रकार से चला। बीच में एक दिन प्रातःकाल के प्रवचन में थोड़ी कठिनाई हुई थी, उस दिन प्रवचान करते-करते ही बहुत जोर की उल्टी आई, जिससे प्रवचन बीच में ही छोड़ना पड़ा, फिर भी परमात्मा की कृपा से यह शिविर बहुत सफलता के साथ सम्पन्न हुआ।

एक बार वानप्रस्थ आश्रम रोजड़ गए हुए थे, वहां नजफगढ़ दिल्ली के कुछ लोग भी उन दिनों आए हुए थे। महात्मा जी ने उससे चर्चा कि २००६ में हम भी आर्यसमाज मेन बाजार नजफगढ़ में अक्टूबर १३ से १५ तक कार्यक्रम में गए थे। मैंने कुछ दिन पूर्व ही दान्त उखड़वाया था, मगर उस ओर के पूरे ही मसूड़े पतली खिचड़ी भी नहीं निगली जाती थी, जिससे असहनीय दर्द थी। प्रवचन देने की बात तो दूर मगर मुझसे पतली भाग को इंजेक्शन व स्प्रे द्वारा सुन्न कर देते थे। कार्यक्रम इतना सफल रहा कि लोग निरन्तर समय बढ़ाने की मांग करते रहे और बढ़ाया भी गए, मगर अब मेरे जबड़ों को दो बार सुन्न किया जाने लगा.. एक दिन प्रवचन के दौरान ही एक युवा महिला खड़ी होकर अपनी हरियानवी भाषा में बहुत ही ऊंचे स्वर में मेरे प्रवचनों की प्रशंसा करते हुए कहने लगी कि ऐसे प्रभावशाली साहब इनके जबड़ों को तीन-चार बार सुन्न किया करें, हम इन्हें घण्टों सुनना चाहते हैं.... नजफगढ़ से आए उन सज्जनों में से एक सज्जन तुरन्त बोले कि वह डाक्टर मैं ही हूँ।

पता : आर्यकुंज, कालांवाली, जिला-सिरसा, हरियाणा-१२५२०१

विचारात्मक

व्यक्ति धर्म, राष्ट्र धर्म एवम् अध्यात्म का उत्तम ग्रन्थ 'गीता'

● - प्रो. उमाकान्त उपाध्याय

श्री नरेन्द्र मोदी जी जापान की राजकीय यात्रा पर गए थे, इस यात्रा के कई आवश्यक निहितार्थ है, दोनों राष्ट्रों, भारत और जापान के बीच कई समझौते हुए, इन समझौतों का आयाम राजनयिक, सामरिक, आर्थिक और सांस्कृतिक होना अनिवार्य था। भारत और जापान के मध्यन चीन जैसा विस्तारवादी, महत्वाकांक्षी अपनी दादागिरी चलाने वाला राष्ट्र है। अपने सभी पड़ोसी देशों को अपने प्रभाव में दबाकर रखने वाली चीन की नीति विश्वप्रसिद्ध है। भारत को सामरिक और आर्थिक दृष्टि से नीचा दिखाकर रखना चीन की विदेश नीति का आवश्यक अंग है। यहां हम भारत चीन के संबधों पर चर्चा नहीं कर रहे हैं। यहां हमारा उद्देश्य केवल इतना सा है कि चीन को यह विदित हो जाए कि भारत का जापान के साथ बहुआयामी समझौता हो चुका है। इससे संभव है कि चीन की आक्रामक नीतियों पर कुछ नियंत्रण हो सकता है। जापान के साथ भारत ने कई प्रकार के समझौते किये। भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने जापान के सम्राट को विश्वविख्यात पुस्तक गीता उपहार में दी। यह एक सूझ-बूझ का महत्वपूर्ण कार्य है। जापान भारत को अपनी धर्मभूमि मानकर बहुत आदर की दृष्टि से देखता है। जापान के धर्मगुरु गौतम बुद्ध को बोधगया में धर्म बोध की प्राप्ति हुई थी। सारनाथ में गौतम बुद्ध ने अपने धर्म का प्रचार करना आरम्भ किया था। बोध गया और सारनाथ दोनों जापानियों के पवित्र तीर्थ स्थल है। हजारों-हजार जापानी पर्यटक प्रतिवर्ष इन दोनों तीर्थों की यात्रा के लिए भारत वर्ष आते हैं। इस दृष्टि से गीता का उपहार अपना सांस्कृतिक महत्व रखता है।

गीता में व्यक्ति धर्म और राष्ट्रधर्म :-

गीता का आरम्भ महाभारत के अद्वितीय योद्धा अर्जुन के विषाद से होता है। जब कौरव-पाण्डव दोनों दलों की सेनाएं व्यूह बनाकर खड़ी हो गयी तो अर्जुन ने अपना रथ दोनों सेनाओं के बीच खड़ा करने का अनुरोध श्रीकृष्ण से किया, अर्जुन ने देखा कि उसके सामने सगे-सम्बन्धी पितामह, गुरु, भाई, बंधु सब मरने मारने को उद्द्यत है, अर्जुन दोनों सेनाओं में सर्वश्रेष्ठ धनुर्धर था, उसके पास पाशुपत और ऐन्द्रास्त्र आदि ऐसे ऐसे दिव्यास्त्र थे कि जिनका प्रतिरोध भीष्म, द्रोण, कर्ण किसी के वश में नहीं था, किन्तु अर्जुन स्वजनों के मोह में अपना व्यक्तिधर्म और राष्ट्रधर्म दोनों गंवा बैठा, वह भूल बैठा कि उसका व्यक्तिधर्म क्षत्रिय का है और राष्ट्रधर्म अन्यायी, अततायियों को मारकर न्याय की स्थापना करना है। वह कहता है -

येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगः सुखानि च,
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणान्स्त्यक्त्वा धनानि च।
(गीता १/३३)

अर्थात् हमें जिनके लिए राज्य, भोग और सुखादि अभीष्ट है, वे ही थे सब धन और जीवन की आशा को त्यागकर युद्ध में खड़े हैं, अर्जुन अपना व्यक्तिधर्म भी नष्ट कर बैठा था, वह महायोद्धा नर्वस हो गया था। वह कहता है, मेरा शरीर ऐंठा जा रहा है, मुख सुख रहा है, शरीर कांप रहा है, मुझे पसीना छूट रहा है, रोयें खड़े हो गए हैं, धनुष मेरे हाथ से छूट रहा है, चमड़ी जल रही है, मैं खड़ा नहीं हो पा रहा हूँ, मेरा मस्तिष्क घूम रहा है, नर्वसनेस का ऐसा सटीक वर्णन विश्व इतिहास में दुर्लभ है। स्मरण रखना चाहिए कि यह वही धनुर्धर अर्जुन है जिसने एक रथ से अकेले ही विराटनगर में कौरव सेना के सभी महारथियों को सेना समेत पराजित कर दिया था। इस प्रकार अर्जुन के विषाद में अर्जुन का व्यक्तिधर्म और राष्ट्रधर्म दोनों नष्ट हो गया था।

श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि अर्जुन तुम पंडितों की भाषा बोल रहे हो, किन्तु यह भूल रहे हो कि आत्मा अमर है और जीवात्मा अजर अमर है, इसलिए जीवात्मा मरता नहीं है, मरता है केवल शरीर और जीवात्मा दूसरा जन्म ले लेता है।- **देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं**

यौवनम् जरा, तथा देहान्तर्प्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति । (गीता २/१३) अर्थात् जैसे जीवात्मा की इस देह में बालकपन, जवानी और वृद्धावस्था होती है, वैसे ही अन्य शरीर की प्राप्ति होती है । इस विषय में धीर पुरुष मोहित नहीं होता और भी **जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।** (गीता २/२७) श्री कृष्ण कहते हैं कि अर्जुन युद्ध करके न्याय की स्थापना क्षत्रिय का धर्म है - **स्वधर्मपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि, धर्म्याद्धियुद्धछ्रेयोऽन्य-त्क्षत्रियस्य न विद्यते** (गीता २/३१) अर्थात् अपने क्षत्रिय धर्म को देखते हुए भी तुम्हें युद्ध से विचलित नहीं होना चाहिए। धर्मयुद्ध से बढ़कर क्षक्षिय का कोई कर्त्तव्य कर्म नहीं है । यदि तुम युद्ध नहीं करोगे तो लोग यही कहेंगे कि अर्जुन युद्ध के भय से डर गया - **हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गम् जित्वा वा भोक्ष्य से महीम्, तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः** । (गीता २/३७) अर्थात् या तो तू युद्ध में मारा जाकर स्वर्ग को प्राप्त होगा अथवा संग्राम में जीतकर पृथ्वी का राज्य भोगेगा, इस कारण हे अर्जुन ! तू युद्ध के लिए निश्चयं करके खड़ा हो जा, इस प्रकार गीता के उपदेश में अर्जुन के व्यक्तिधर्म और राष्ट्रधर्म की रक्षा की है ।

गीता अध्यात्म का ग्रन्थ :-

गीता में लगभग ७०० श्लोक बताये जाते हैं, इनमें से संभवतः आधे से अधिक अध्यात्म की उन्नति से संबंधित है । हम इतने विशाल विषद प्रसंग को इस छोटे से लेख में लिखने में असमर्थ हैं, फिर भी इतना तो कहना ही चाहते हैं कि प्राणायामपूर्वक ओंकार का जप, उसी की भावना करते रहना चाहिए, श्रीकृष्ण की सम्मति में यज्ञ, दान और तप मनीषियों को भी पवित्र करने वाले हैं । अतः यज्ञ (सारे परमार्थकारी) दान (धन, अन्न, वस्त्र, विद्या आदि सभी कर्म) और तप अपने कर्म को सत्यनिष्ठा से करना आवश्यक है ।

अध्यात्म की उन्नति में सबसे बड़ी बाधा मनोविकारों की है । मनोविकार - काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि कभी इन्द्रियों को प्रभावित करके मन को दबा लेते हैं और कभी मन में पैदा होकर इन्द्रियों को उत्तेजित कर देते हैं । कभी रसगुल्ले का स्वाद जीभ को प्रभावित करके मन पर अधिकार कर लेते हैं । कभी मन पर अधिकार करके जीभ को प्रभावित कर लेते हैं । इनमें काम (सेक्स) और क्रोध साथ-साथ रहते हैं तथा सबसे अधिक बलवान अर्जुन ने एक प्रश्न पूछा है - **अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पुरुषः, अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः ।** (गीता ३/३६) अर्थात् मनुष्य न चाहते हुये भी किसके द्वारा प्रेरित होकर पाप का आचरण करता है । श्रीकृष्ण उत्तर देते हैं - **काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः, महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ।** (गीता ३/३७) अर्थात यह काम (सेक्स) और क्रोध ही है जो भोगों से कभी तृप्त नहीं होता जैसे घी और काठ से अग्नि बढ़ती ही है, उसी प्रकार यह काम भी भोगने से बढ़ता ही है, इस जीवन विनाश की प्रक्रिया गीता में निम्न प्रकार है - **ध्यायतो विषयान्पुन्सः संगस्तेशूपजायते, संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ।** (गीता ३/६३) । **क्रोधाद्भावति सम्मोहः संमोहात्स्मृतिविभ्रमः, स्मृतिभ्रन्शाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ।** (गीता ३/६२) । मनुष्य विषयों का चिंतन करने मेंआसक्त हो जाता है, उससे विषयों को भोगने की कामना उत्पन्न होती है । इसी में क्रोध स्थाई बन जाता है । काम और क्रोध से मोह पैदा हो जाता है । मोह के कारण ज्ञान-विज्ञान सब नष्ट हो जाते हैं और इसी से मनुष्य का बुद्धि, विवेक नष्ट हो जाता है और मनुष्य जीवन का नाश हो जाता है । अतः श्रीकृष्ण कहते है कि मनुष्य के इन्द्रिय, मन और बुद्धि में इस काम भावना का निवास हो जाता है, इसलिए इन्द्रियों और मन का नियंत्रण करके इस ज्ञान-विज्ञान के विनाशक शत्रु को मार डालना चाहिए ।

परम धाम का द्वार

काम क्रोध और लोभ का, सदा करो तुम त्याग ।
कभी कसी भी जीव से, रखो न अनुराग ।।
रखो न अनुराग, प्रभु का नाम जपा कर ।
अहंकार व द्वेष-भाव से, दूर रहा कर ।।
पाठक की यह विनय, कर्म यदि शुद्ध करेगा ।
परम धाम का द्वार, सदा ही खुला रहेगा ।।

"मृत्यु क्या है और कैसी होनी चाहिए"

मृत्यु जीवन का सुख-दुःख से भरी संघर्षमयी यात्रा का मानो विश्राम है ।
दिन भर किया निरन्तर कठोर परिश्रम के बाद समझो मिला रात्रि का विश्राम है ॥१॥
डरो नहीं, गुण कर्म करते हुए इसका आलिंगन करने में ही मनुष्य मात्र की शान है ।
इसका उद्देश्य ही कर्म बन्धनों से छुड़ाकर प्राप्त करवाना जीव का जो अन्तिम लक्ष्य मोक्ष धाम है ॥२॥
जीवन में करते रहे कर्म अच्छे, परोपकार और करते रहो योग, आसन और प्राणायाम ।
हमारे लिये ही जिस ईश्वर ने बनाई यह पूरी सृष्टि, करो याद उसे प्रातः और शाम ॥३॥
जीव की यात्रा अनगिनत पन्नों की है, यह पुस्तक जिसका जीवन रखा नाम है ।
एक पन्ना जो पद बिना, यह मृत्यु समझो किया उसे ही पलटने का जरुरी काम है ॥४॥
आप यह समझो यदि जन्म सुखदायी, सुहावनी प्रातः का करवाती हमें ज्ञान है ।
तो मृत्यु समझो हमारे दुःख कष्ट निवारण के लिये बनकर आई सुनहरी शाम है ॥५॥
मनुष्य जीवन में भोगों को भोगने के लिए किये उसने शुभ-अशुभ जो काम है ।
यह मृत्यु समझो उन किये कर्मों का ईश्वरीय न्याय व्यवस्था से मिलने वाला परिणाम है ॥६॥
जिसने अपने जीवन में की करुणा, ममता, दया, प्रेम और किया जनहित का काम है ।
ईश्वरीय न्याय व्यवस्था से मृत्यु के बाद निश्चित, उसे अच्छी योनि मिलने का प्रावधान है ॥७॥
किसी का जीवन भी मृत्यु तुल्य कहलाता, किसी की मृत्यु भी अमरत्व के समान है ।
किसका कैसा जीवन बीता, उसके साथी लोग ही दे देते उसके जीवन का सही प्रमाण है ॥८॥
मनुष्य वही जो दुःख में भी हंसते-हंसते मृत्यु का कर लेता अमृत पान है ।
ईश्वर समर्पित मनुष्य के लिए मृत्यु रोना नहीं बल्कि होती मीठी मुस्कान है ॥९॥
कभी-कभी अच्छे व्यक्ति को भी कष्ट भरी मृत्यु का करना पड़ता सम्मान है ।
महर्षि जी की भांति समझना चाहिए, मुझे मिल रहा ईश्वर की तरफ से वरदान है ॥१०॥
जिसका पूरा जीवन रहा हो उत्तम, आदर्श, श्रेष्ठ, महान, अनोखा, अनुपम और बे मिशाल है ।
उनकी मृत्यु भी बन जाती सबके लिए प्रेरणादायक, और बना देती सबको खुशहाल है ॥११॥

-**खुशहालचन्द्र आर्य**, गोविन्दराम एंड संस, १८०, महात्मागांधी रोड, दो तल्ला, कोलकाता-७००००७

स्वयं का सफल निर्माण करें, अगर जिंदगी में सफल होना हो

व्यक्ति को अपना जीवन खुद जीना चाहिए। शायद व्यक्ति स्वयं के निर्माण तथा अपनी जिन्दगी खुद जीने के विचारों से पूरी तरह मुखातिब हो चुका होगा। व्यक्ति को स्वयं ज्ञात हो चुका है कि बडी शक्तियों से अंतर्निहित गुण का कितना महत्व है।

भारत को स्वतंत्र कराने में आर्यसमाज का योगदान

वैचारिक

आशीष यादव

आर्य समाज एक अमर क्रान्ति का नाम है। एक ऐसी क्रान्ति जिसने अपने परिवर्तनशील प्रवाह से एक नई चेतना और नया आलोक बिखेर दिया। यह एक ऐसी आग है जिसमें जलन और तपन नहीं, बल्कि उत्साह, वेग और अविरल गतिशीलता है, इसके संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती जन्मजात क्रान्तिकारी थे। उनकी क्रान्ति संकुचित नहीं थी बल्कि बहुआयामी विषयों को अपने भीतर समाविष्ट किए हुए थी। उनकी क्रान्ति के स्रोत बहुमुखी थे। उनका ओज-तेज स्वयं उनकी महानता का साक्षी था। उन्होंने बचपन से ही झूठ, छलकपट और जर्जर मान्यताओं से संघर्ष किया। जड़ता और चेतनता की ओर उनका अभियान उसी समय प्रारम्भ हो गया था जब वे अभी मात्र तेरह वर्ष के थे। उसी अल्पवय से वे सब गली सड़ी परम्पराओं के प्रति विद्रोही हो उठे थे, झूठे शिव को त्याग कर सच्चे शिव को प्राप्त करने का संकल्प था। उनकी क्रांति का ही एक हिस्सा था। इनके उत्कट देशप्रेम की भावना इनके प्रवचन और ग्रन्थों के अध्ययन से सहज प्राप्त हो जाती है। सन् १८५७ के स्वतंत्रता संग्राम की नींव इसी क्रांतिकारी ने घूम-घूम कर रखी थी यह नहीं इसने अपनी सक्रिय भूमिका भी निभाई मगर समय से पूर्व ही प्रस्फुटित होने और अपने ही देश के कुछ गद्दारों के विश्वासघात के कारण यह संग्राम सफलता के मस्तक को चूम नहीं सका।

भारत का कुछ नहीं बिगाड़ा विदेशी तलवारों ने।
भारत को बर्बाद किया है, भारत के गद्दारों ने॥

मगर दयानन्द जी इसमें हताश और निराश नहीं हुए बल्कि स्वतंत्रता की लड़ाई की नींव और अधिक गहरी रखने के प्रयास में जुट गए। इनके हृदय में राष्ट्र के प्रति अथाह प्रेम था। तभी तो सन् १८७२ में भारत के वायसराय नार्थ ब्रूक के मुंह पर ही इस फकीर ने कहा दिया था - "**मैं नित्य प्रातः सायं परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि मेरा देश पराई दासता से मुक्त हो**" अपने विश्व विख्यात ग्रन्थ "**सत्यार्थ प्रकाश**" के आठवें समुल्लास में लिखते हैं - कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है" लोकमान्य जी का कथन है - "**दयानन्द स्वराज्य शब्द के प्रथम सन्देश वाहक थे**" मदन मोहन मालवीय जी कहते हैं - "**वे भारत को स्वतंत्र तथा दिव्य देखना चाहते थे**" इसी स्वतंत्रता और दिव्यता की विधिवत् प्राप्ति के लिए उन्होने सन् १८७५ में आर्यसमाज की स्थापना की। आर्यसमाज ने चारो ओर चेतनता और जागरण की धूम मचाई थी कि एक अमेरिकन विद्वान् ने कहा - "**मैं एक धधकती ज्वाला को देख रहा हूँ अनन्त प्रेम की अनन्त ज्वाला जो समस्त द्वेष दावानल को भस्मसात् कर देगी। इस धधकती ज्वाला का नाम है आर्यसमाज**"

जंजीरों से जकड़े स्वदेश को राह दिखाई थी तूने, जिसको न काल भी बूझा सके वह शमा जलाई थी तूने॥
घनघोर तिमिर के आंगन में तू बीज उषा के बोया था।
आवाज लगाई थी तूने जब सारा भारत सोया था॥

धीरे-धीरे "आर्यसमाज" क्रान्तिकारियों का पर्यायवाची बन गया। एक अंग्रेज विद्वान् के अनुसार "**किसी भी आर्य समाजी की खाल को खुरच कर देखो तो अन्दर छिपा हुआ क्रान्तिकारी देशभक्त दयानन्द दिखाई देगा**" आर्यसमाज क्रान्तिकारियों का स्त्रोत बन गया - श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा, बालगंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय, लाला हरदयाल, भाई परमानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, वीरसावरकर, मदनलाल ढिंगरा, सरदार भगतसिंह, पं. काशीराम, राम प्रसाद बिस्मिल, रोशनसिंह लाहड़ी, चन्द्रशेखर आजाद जैसे सैकड़ों वीर भारत माँ की बेड़ियों को छिन्न-भिन्न करने के लिए अपने प्राण हथेली पर रखकर कूद पड़े थे। आर्यसमाज

पर बनी रहती थी यहाँ तक कि आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संगों में अंग्रेजों के गुप्तचर बैठे रहते थे। आर्यसमाज को कई यातनाएँ सहनी पड़ी और नरम गर्म दोनों दलों में यह अपनी सक्रिय भूमिका निभाता रहा।

डॉ. पट्टाभि सीतारमैया अपने इतिहास ग्रन्थ में लिखते हैं- **"स्वतंत्रता संग्राम में 85 प्रतिशत से भी अधिक आर्यसमाज के सदस्यों का सहयोग रहा "** आज हम स्वतंत्र तो हो गये हैं मगर जिस स्वतन्त्र भारत की कल्पना हमारे शहीदों ने की थी उसका निर्माण हम आज ६३ वर्षों के पश्चात् भी नहीं कर पाए है।

वो कफन चुराकर बैठ गये जा महलों में,
देखो गांधी की अर्थी नंगी जाती है।
अब राम राज्य के सुघर रेशमी दामन में,
देखो सीता की लाज उतारी जाती है ॥

आर्यसमाज ने अपने बलिदानों की कीमत नहीं मांगी अन्यथा वह भी अपनी रोटियां सेकने आगे बढ़ सकता था। अपनी त्याग और तपस्या का ढिंढोरा नहीं पीटा जबकि स्वतंत्रता प्राप्ति में उसका अधिकतम सहयोग रहा।

सुप्रसिद्ध नेताओं के ये हार्दिक उद्‌गार आर्यसमाज के कार्य की मुंह बोलती तस्वीर है, श्रीमती एनिबीसेन्ट ने लिखा है - **"महर्षि दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारतवासियों के लिए नारा लगाया"** राजा महेन्द्र प्रताप कहते है - **"आर्यसमाज क्रान्तिकारियों की संस्था है इसके सदस्यों में देशप्रेम की भावना है "** सर्वपल्लीराधाकृष्णन् का कथन है - **"स्वामी जी ने स्वराज्य का सबसे पहले सन्देश दिया था "** लाल बहादुर शास्त्री जी ने कहा - **"महर्षि दयानन्द महान् राष्ट्र नायक नेता और क्रान्तिकारी महापुरुष थे और उन्होंने राजनीतिक क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किया "** पारसी नेता दादा भाई नोरोजी कहते है कि- **"मुझे स्वामी दयानन्द जी के ग्रन्थों से स्वराज्य की लड़ाई में बड़ी प्रेरणा मिली है "** महाराष्ट्र के नेता एन.वी. गाडगिल का कहना हैं - **"महाराष्ट्र में जो स्थान छत्रपति शिवाजी अथवा समर्थ गुरु रामदास जी का है वही स्थान भारत के राष्ट्रीय उत्थान में महर्षि दयानन्द का है "।**

वास्तव में कालान्तर में कांग्रेस ने जिन कार्यों को स्वतंत्रता संग्राम का आधार बनाया उनकी घोषणा महर्षि दयानन्द पहले ही कर चुके थे सरदार वल्लभभाई पटेल के शब्दों में **"मेरी दृष्टि में वे सच्चे राजनीतिज्ञ थे चालीस वर्षों से कांग्रेस का जो कार्यक्रम रहा है ये सब कार्य साठ वर्ष ऋषि दयानन्द ने देश के लिए रखा था। सारे देश में एक भाषा खादी, दलितोद्धार स्वराज्य की घोषणा आदि सब दयानन्द ने देश को दिया "** तभी तो भूतपूर्व लोकसभा अध्यक्ष अनन्त शयनम् आयंगर ने कहा **"यदि गांधी जी राष्ट्रपिता है तो महर्षि दयानन्द राष्ट्र के पितामह थे "।**

महर्षि हमारी राष्ट्रीय प्रवृत्तियों और स्वतंत्रता आन्दोलन के आद्य प्रवर्तक थे। आज जबकि समूचा राष्ट्र पुनः बिखरने की कगार पर खड़ा है। सम्प्रदायवाद का जहर गांव-गांव तक पहुंच गया है। मजहबी कोढ़ ने गली-गली को अपनी सड़ान्ध से सराबोर कर दिया है हमें पुनः राष्ट्रीय प्रवृत्तियों और स्वतंत्रता के आद्य प्रवर्तक महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज की शिक्षाओं की ओर लौटना लड़ेगा। यही असाम्प्रदायिक विचारधारा हमें आज उबार सकती है। मार-काट और खून-खराबे के राक्षसी बादल पुनः मंडरा रहे स्वार्थी जनून का काला आवरण हमारी ओर बढ़ रहा है। इसे महर्षि की मानवतावादी विचारधारा से विदीर्ण करना होगा तभी इस स्वतंत्रता की रक्षा हो सकती है अन्यथा अपनी इस गफलत का हमें बहुत मूल्य चुकाना पड़ेगा।

वक्त की फिक्र कर नादान, मुसीबत आने वाली है,
तेरी बरवादियों के मशविरे है आसमानों में।
न समझोगे तो फिर जाओगे ए हिन्दोस्तां वालों,
तुम्हारी दास्ता तक भी न होगी दास्तानों में ॥

पता - ग्राम-बायमूड़, पो. हिरौनी, जिला-बंदायू (उ.प्र.) २०२१२५

बच्चों पर निवेश करने की सबसे अच्छी चीज है, अपना समय और अच्छे संस्कार। ध्यान रखें एक श्रेष्ठ बालक का निर्माण सौ विद्यालयों को बनाने से भी बेहतर है।

- सम्राट विक्रमादित्य

विश्लेषणात्मक

गीता में भक्तियोग

- महात्मा चैतन्यमुनि

मुख्यतः भक्ति का अर्थ है परमात्मा के चिन्तन द्वारा योगयुक्त होने की विधि। गीता में चार प्रकार के भक्तों की श्रेणियां बताई गई है तथा उनमें उस ज्ञानी व्यक्ति को श्रेष्ठ कहा गया है जो अनन्य-भक्तिवाला है - **चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सकृतिनोऽर्जुनः। आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ । तेषां ज्ञानी नित्युक्त एकभक्तिर्विशिष्यते । प्रियो हि ज्ञानिनोऽयर्थमहं स च मम प्रियः ॥** (गी. ७-१६, १७) । हे भरतकुल में श्रेष्ठ अर्जुन ! चार प्रकार के सुकर्मी मेरी भक्ति करते हैं। वे है - आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी और ज्ञानी। उन सब में ज्ञानी व्यक्ति, जो सदा ब्रह्म के साथ युक्त रहता है, जो एक भक्ति है, अनन्य-भक्ति वाला है, सबसे विशिष्ट है, सबसे श्रेष्ठ है क्योंकि मैं इस प्रकार के ज्ञानी भक्त को अत्यन्त प्रिय हूँ और वह मुझे अत्यन्त प्रिय है। श्लोक में चार प्रकार के जो भक्त बताए गए हैं उन्हें हम इस प्रकार से समझ सकते हैं कि एक तो **आर्त** भक्त है अर्थात् जो केवल कष्ट एवं दुःख आने पर प्रभु को स्मरण करते हैं कि हे प्रभु ! आप मेरे दुःखों को दूर कर दें। दूसरे हैं **अर्थार्थी**- जो 'अर्थ' अर्थात् धन-वैभव व अन्य पदार्थ प्राप्त करने के लिए प्रभु की भक्ति करते हैं, जिज्ञासु भक्त वे हैं जो अपनी ज्ञान की वृद्धि के लिए भक्ति करते हैं। गीता के १३वें अध्याय में ज्ञान तथा अज्ञान की चर्चा विस्तार के साथ की गई है। वास्तव में ज्ञानी कौन है? इस सम्बन्ध कहा गया है -

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् ।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥
इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च ।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥
असक्तिनरनभिष्वंगः पुत्रदारगृहादिषु ।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टोपपत्तिषु ॥
मयि चानन्ययोगेन भक्तिव्यभिचारिणी ।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि ॥
अध्यात्मज्ञाननित्त्वं तत्वज्ञानार्थदर्शनम् ।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा ॥

(गी. १३-७ से ११)

अर्थात् अभिमान न करना, दंभ-छल-कपट न होना, अहिंसा, क्षमा, सरलता, आचार्य की सेवा, शरीर तथा मन की शुद्धता, स्थिरता, आत्म-संयम, इन्द्रियों के विषय में वैराग्य, अहंकार-शून्यता, संसार में जन्म-मृत्यु-वृद्धावस्था, रोग और दुःख इन दोषों को देखना, अनासक्ति, पुत्र-स्त्री-गृह आदि के साथ मोह का न होना, अभीष्ट और अनभिष्ट प्रिय तथा अप्रिय में सदा समचित्त, निरन्तर सम-भाव रखना, अनन्य-भाव से मुझ में एकनिष्ठ भक्ति, एकान्त स्थान का सेवन, जनसमुदाय में सम्मिलित होने में अरुचि, निरन्तर आत्मा के ज्ञान में मग्न रहना, तत्वज्ञान ही जीवन का अर्थ है, प्रयोजन है यह भान हो जाना यही ज्ञान है और इसके विपरीत अज्ञान है। इसी क्रम में आगे कहा गया - **ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वाऽमृतश्नुते। अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते ॥** (गी. १३-१२) अब मैं तुझे यह बताऊंगा कि 'ज्ञेय' क्या है, जानने योग्य क्या है जिसे ज्ञान लेने पर अमृत की प्राप्ति हो जाती है। वह ज्ञेय है- अनादि परब्रह्म जिसके विषय में न यह कह सकते हैं कि वह सत् है, न यह कह सकते है कि वह असत् है (ब्रह्म के सम्बन्ध में नेति-नेति कहा जाता है, यह आशय है)।

इस प्रकार यह जो तीसरे प्रकार का जिज्ञासु भक्त है, वह धीरे धीरे जिज्ञासा करते हुए तथा आर्ष-ग्रन्थों एवं आप्त पुरुषों के सम्पर्क में आकर उन जिज्ञासाओं का निरन्तर समाधार करते हुए ज्ञानी बन जाता है। इसलिए श्रीकृष्ण जी ने चौथे प्रकार के भक्त को ज्ञानी भक्त कहा है और इस भक्त के बारे में वे यह भी कहते हैं कि ऐसा ज्ञानी भक्त ही मुझे प्रिय है तथा उसे मैं प्रिय हूँ। जिसने उपरोक्त ज्ञान को अपने से आत्मसात्कर लिया है और उस स्थिति में अविरल श्रद्धा-भक्ति के साथ प्रभु-स्तवन करता है। इस प्रकार के ज्ञानी भक्तों को श्रीकृष्ण ने उत्तम कहा है क्योंकि वे 'माम्

एव हि आस्थितः' परमात्मा में ही स्थित हो जाते हैं.. इससे इतर भक्तों के बारे में वे कहते हैं - **अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धायः। परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम्॥** (गी. ७-२५) मूर्ख लोग परमात्मा को, जो अव्यक्त है, व्यक्तरुप में जन्म लेने वाला मानने लगते हैं। वे कुछ नहीं जानते। वे अज्ञानी भक्तों की श्रेणी में आते हैं। परमात्मा तो अव्यक्त, अविनाशी और अतिउत्तम है। वह अव्यक्त अर्थात् इन्द्रियों से नहीं देखा जा सकता है। इस प्रकार देखे तो गीता में श्रेष्ठ भक्ति का आशय अतिउत्तम है। वह अव्यक्त अर्थात् इन्द्रियों से नहीं देखा जा सकता है। इस प्रकार देखें तो गीता को जानकर **'प्रपद्यन्ते'** उसका अनुकरण करना, उन गुणों को अपने व्यवहार में लाना। परमात्मा के स्वरुप को जानकर उन गुणों का चिन्तन करना और फिर वैसा बनने का प्रयास करना। बाकी देवों की पूजा करने से उस-उस देवता के गुणों का ग्रहण होगा मगर मोक्ष-प्राप्ति के लिए प्रभु की भक्ति करनी ही अपेक्षित है। इस सम्बन्ध में गीता में ही अन्यत्र कहा गया है कि जो सच्चिदानन्द आदि गुणों से परिपूर्ण है, उस परमात्मा की प्राप्ति के लिए अपने पापों को मस्तक-भ्रुवों के मध्य करके परमात्मा से योग-मिलाप करना चाहिए, अहंकार का उच्चारण करते हुए जो शरीर त्यागता है वह परमगति को प्राप्त होता है अतः उस एक अक्षर ओम् का जाम करना चाहिए।

भारतीय साहित्य में मोक्ष-प्राप्ति के लिए तीन साधन बतो गए है, ज्ञान-कर्म और उपासना। ज्ञान का सम्बन्ध मस्तिष्क से है, कर्म का सम्बन्ध इन्द्रियों से है और उपासना का सम्बन्ध हृदय से है। ज्ञान के मार्ग को ज्ञानयोग, कर्म के मार्ग को कर्मयोग और उपासना के मार्ग को भक्तियोग कहा जाता है। उपासना के लिए आप्त-पुरुषों ने अष्टांगयोग का प्रावधान किया है उनमें से प्रथम अंग यम है - **तत्राऽहिंसासत्याऽस्तेयब्रम्हचर्याऽपरिग्रहा यमाः॥** (यो. २-३०) जो उपासना का आरम्भ करना चाहे उसके लिए यही आरंभ है कि वह किसी से बैर न रखे, सर्वदा सबसे प्रीति करे। सत्य बोले। मिथ्या कभी न बोले। चोरी न करे। सत्य व्यवहार करे। जितेन्द्रिय हो। लम्पट न हो और निराभिमानी हो। अभिमान कभी न करें। उपासना-योग का दूसरा अंग नियम है - **'शौचसन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः॥'** (यो.द. २-३१) राग द्वेष छोड़ भीतर और जलादि से बाहर पवित्र रहे। धर्म से पुरुषार्थ करने से लाभ में न प्रसन्नता और हानि में न अप्रसन्नता करे। प्रसन्न होकर आलस्य छोड़ सदा पुरुषार्थ किया करे। सदा दुःख सुखों का सहन और धर्म ही का अनुष्ठान् करे, अधर्म का नहीं। सर्वदा सत्य शास्त्रों को पढ़े पढ़ावे। सत्पुरुषों का संक करे और ओ३म् इस एक परमात्मा के नाम अर्थ विचार करके नित्यप्रति जप किया करे। अपने आत्मा को परमेश्वर की आज्ञानुकूल समर्पित कर देवे। योग का तीसरा अंग है - **'स्थिरसुखमासनम्॥'** (यो.द.२-४६) जिससे सुखपूर्वक शरीर और आत्मा स्थिर हों, उसको आसन कहते हैं, अथवा जैसी रुचि हो वैसा आसन करें। आसन के सम्बन्ध में दो बातें प्रमुख है - स्थिरता और सुख। **योग का चौथा अंग है - 'प्राणायाम'।** प्राणायाम के लाभ इस प्रकार बताए गए हैं - प्राण अपने वश में होने से मन और इन्द्रियां भी स्वाधीन होते हैं। बल पुरुषार्थ बढ़कर बुद्धि तीव्र सूक्ष्म रुप हो जाती है कि जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण करती है इससे मनुष्य शरीर में वीर्य वृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर, बल, पराक्रम, जितेन्द्रियां सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझकर उपस्थित कर लेगा। जब मनुष्य प्राणायाम करता है तब प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता जाता है। जब तक मुक्ति न हो तब तक उसके आत्मा का ज्ञान बराबर बढ़ता जाता है... जैसे अग्नि में तपाने से सुवर्णादि धातुओं का मल नष्ट होकर शुद्ध होता है, वैसे प्राणायाम करके मन में आदि इन्द्रियों के दोष क्षीण होकर निर्मल हो जाते हैं, योग का **पांचवा अंग प्रत्याहार है।** प्रत्याहार उसका नाम है कि जब पुरुष अपने मन को जीत लेता है, तब इन्द्रियों का जीतना अपने आप हो जाता है। क्योंकि मन में ही इन्द्रियों को चलाने वाला है। 'प्रीति-आहार अर्थात् इन्द्रियों द्वारा अपने अपने विषयों का भोग न करना या उसकी ओर लालायित न रहना। इस प्रकार अपने अपने विषय के साथ सम्बन्ध न रहने पर इन्द्रियों की स्थिति चित्त के समान होने का नाम ही प्रत्याहार है। तब यह मनुष्य जितेन्द्रिय होके जहां अपने मन को ठहराना

वा चलाना चाहे, उसी में ठहरा और चला सकता है और फिर उसको ज्ञान हो जाने से सदा सत्य में प्रीति हो जाती है और असत्य में कभी नहीं।'

इसकें पश्चात् योग का छटा अंग है - **'धारणा'**। **देशबन्धचित्तस्य धारणा** (यो. द.३-१) अर्थात् चित्त को किसी विशेष स्थान पर स्थिर करना धारणा है। जब उपासना योग के पूर्वोक्त पांचों अंग सिद्ध हो जाते हैं, तब उसका छठा अंग धारणा भी यथावत प्राप्त होती है (धारणा) उसको कहते हैं कि मन को चंचलता से छुड़ाके नाभि, हृदय, मस्तक, नासिका और जीभ के अग्रभाग आदि देशों में स्थिर करके ओंकार का जप और उसका अर्थ जो परमेश्वर है उसका विचार करना। अन्यत्र कहा गया है- नाभि, हृदय, मूर्धा, ज्योति अर्थात् नेत्र, नासिकाग्र, जिव्हाग्र इत्यादि देशोंके बीच में चित्त को योगी धारण करें। तथा वाह्यविषय जैसा कि ओंकार वा गायत्री मन्त्र इनमें चित्त लगावे। क्योंकि **तज्जपस्तदर्थभावनं** (यो.द. १-२) यह सूत्र है योग का। इसका योगी जप अर्थात् चित्त से पुनः पुनः आवृत्ति करे और इसका अर्थ जो ईश्वर उसको हृदय में विचारे। **तस्य वाचकः प्रणवः** (यो.द. १-२७) ओंकार का वाच्य ईश्वर है। और उसका वाचक ओंकार है। योग का सातवां अंग ध्यान है। **तत्र प्रत्यैकतानता ध्यानम्** (यो.द. ३-२) धारणा के पीछे उसी देश में ध्यान करने और आश्रय लेने योग्य जो अन्तर्यामी व्यापक परमेश्वर है, उसके प्रकाश और आनन्द में अत्यन्त विचार और प्रेम भक्ति के साथ इस प्रकार प्रवेश है कि जैसे समुद्र के बीच में नदी प्रवेश करती है। उस समय में ईश्वर को छोड़कर किसी अन्य पदार्थ का स्मरण नहीं करना किन्तु उसी अन्तर्यामी के स्वरुप और ज्ञान में मग्न हो जाना, इसी का नाम ध्यान है। **योग का आठवां अंग समाधि है।** उपरोक्त योगों का अनुष्ठान विधिपूर्वक करने से यह स्थिति प्राप्त होती है। ... जैसे अग्नि के बीच में लोहा भी अग्नि रुप हो जाता है, इसी प्रकार ईश्वर के ज्ञान में प्रकाशमय होके अपने शरीर को भी भूले हुए के समान जानके आत्मा को परमेश्वर के प्रकाशस्वरुप आनन्द और ज्ञान में परिपूर्ण करने को समाधि कहते हैं। समाधि के दो भेद है- असम्प्रज्ञान एवं सम्प्रज्ञात समाधि... पिर मोक्ष की प्राप्ति होती है ... गीता में इसे ही भक्तियोग कहा गया है। जब अर्जुन योग में सफलता व असफलता के सम्पन्ध में प्रश्न करता है तो योगीराज श्रीकृष्ण उसे पूर्णतः आश्वत् करते हुए कहते हैं -

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद् दुर्गतिं तात गच्छति।
प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचिनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते॥
अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम्।
एतद्दि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम्॥
तत्र तं बुद्धियोगं लभते पौर्वदेहिकम्।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन॥
पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते॥

(गी. ६-४ से ४४)

ऐसे मनुष्य का विनाश न तो यहां होता है, न वहां। कोई भी कल्याण-कार्य करने वाला कभी दुर्गति को प्राप्त नहीं करता। जिस स्थान को पुण्यशाली लोग पाते हैं, उसे पाकर वहां बहुत समय रहने के उपरान्त वह योग-भ्रष्ट, पवित्र और श्रीमान् लोगों के घर में जन्म लेता है। अथवा वह बुद्धिमान् योगियों के कुल में ही जन्म लेता है... जो इस संसार में और भी अधिक दुर्लभ है। वहां वह पूर्वजन्म के बुद्धि-संयोग को (संस्कारों को) फिर पा जाता है और (जहां से पहले छोड़ा था) वहां से फिर संसद्धि (मोक्ष) पाने के लिए यत्न करता है। वह अपने पिछले जन्म के अभ्यास के द्वारा विवश-सा होकर योग की ओर खिंचता है क्योंकि योग का जिज्ञासु तक भी सकाम विधि-विधान करने वाले से, शब्द-ब्रह्म तक सीमित रह जाने वाले से, ब्रह्म की सिर्फ शाब्दिक चर्चा करने वाले से आगे निकल जाता है ...।

पता : महर्षि दयानन्द धाम, महादेव, सुन्दरनगर १७४४०१ (हि.प्र.)

जितना-जितना ज्ञान बढ़ेगा उतना-उतना सफलता से फासला घटेगा

आरोग्य जगत्

होमियोपैथी से सर्दी नजला (साइनस) का उपचार

- डॉ. विद्याकान्त त्रिवेदी
(होमियोपैथिक चिकित्सक)
मोबा. : ९८२६५११९८३, ९४२५५१५३३६

भागदौड़ व तनावपूर्ण जिंदगी में लोगों का बीमारियों से बचना आसान नहीं है। बदलती जीवन शैली के चलते आये दिन कोई न कोई बीमारी हमें घेरे रहती है, प्रदूषण, मानसिक तनाव, वातावरण के बदलाव, खान-पान की गलत आदतें, जिससे नए जीवाणु विकसित होते हैं, सर्दी जुकाम समझकर उसे गंभीरता से नहीं लेते, जो आगे चलकर यह समस्या बढ़ जाती है।

होमियोपैथी में इन रोगों की अचूक औषधियाँ हैं, जो लक्षणों के आधार पर देने से रोगों को नियंत्रण करने में सफलता मिलती है। सामान्य जुकाम को नैसोफेरिन्जाइटिस, राइनोफेरिन्जाइटिस अत्यधिक नजला या जुकाम के नाम से जाना जाता है। यह ऊपरी श्वसन तंत्र का आसानी से फैलने वाला संक्रामक रोग है, जो अधिकांश नासिका को प्रभावित करता है, ऐसे दो सौ से अधिक वायरस होते हैं जो सामान्य जुकाम का कारण बन सकते हैं।

नाक साइनस गले व कंठनली (ऊपरी श्वसन तंत्र का संक्रमण) मुख्य रुप से नासिका का मनुष्यों में सबसे अधिक होने वाला यह संक्रामक रोग है।

लक्षण :-

सबसे आम लक्षणों में खांसी, नाक का बहना, नासिका मार्ग में अवरोध और गले में खराश होती है, मांसपेशियों का दर्द, थकान का अनुभव, सिर में दर्द भूख कम लगना, नवजात शिशुओं और बच्चों में यह एक आम समस्या बन गई है। बलगम का रंग हरा या पीला होता है। बहुत जल्द छिक आना अधिक ठण्ड महसूस करना, बुखार आना आदि इसके लक्षण हो सकते हैं।

होमियोपैथिक उपचार :-

होमियोपैथी पद्धति से उपचार कराकर कई रोगी स्वस्थ हो गए हैं एवं कई रोगियों का उपचार चल रहा है। सम्पूर्ण लक्षणों को मिलान कर चुनी हुई औषधि देने से अत्यधिक सफलता पाई गई है।

प्रमुख औषधि :- जेल्सिमियम, एकोनाईट, फेरमफास, मार्कसाल, यूपिटोरियम, ब्रायोनिया, सल्फर, नक्स, एलियमसीपा, बेलादोना आदि।

कविता

नया जंग फिर शुरु करो

हर हाथ रंगा है रिश्वत से, हर शख्स ठगी से जुड़ा हुआ,
पिंजर से पिंजर निकल रहे, हर जगह गबन है दफन हुआ।
पेट्रोल के नाम पे खुली लूट, सरकार स्वयं जब चला रही,
उस लूट को रोके कौन भला, शासन ही जिससे जुड़ा हुआ।
रुपयों की कीमत कौड़ी हुई, जनता की बचत सब हवा हुई,
खैरात लुटा कर कर्जों की, बैंकों का बण्टाधार किया।
आतंक उत्पात नहीं रुकते, हर सांस जुल्म से जरी हुई,
निर्दोष की मौतों पर इनकी, कुर्सी का पाया टिका हुआ।
शिक्षा-स्वास्थ्य व्यापार बना, केपीटेशन के नाम लूट मचा,
कानून-न्याय की परवाह किसे, शासन ही डाकू बना हुआ।
जनतंत्र नहीं ये जातितंत्र, परिवार-वाद का है षड़यंत्र,
देश की लूटिया डुबो कर भी, अपनो को मालामाल किया।
धर्म-जुनून का तुष्टीकरण, हल नहीं है देश-समस्या का,
मत बख्शो देश-भंजकों को, सख्ती से कुचलो खत्म करो।
क्या यही है देश की आजादी ? दी इसके लिए थी कुर्बानी ?
इक नया जंग फिर शुरु करो, मक्कारों से मुल्क को मुक्त करो।

- मधु काबरा

समाचार प्रवाह

छाल के बाल वैज्ञानिकों ने जिले में लहराया डी.ए.वी. का परचम

छाल (रायगढ़) । विगत दिनों राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस २०१९ के जिला स्तरीय आयोजन में डी.ए.वी. छाल के बाल वैज्ञानिकों ने बेहतरीन प्रदर्शन करते हुए कनिष्ठ एवं वरिष्ठ वर्गों में प्रथम स्थान प्राप्त किया। जिला स्तरीय प्रतियोगिता में डी.ए.वी. छाल के तीन बाल वैज्ञानिकों ने अपने शोध प्रपत्र प्रस्तुत किए, विशेष उल्लेखनीय है कि तीनों ही शोध प्रपत्रों का चयन छत्तीसगढ़ राज्य स्तरीय प्रतियोगिता के लिए किया गया। कनिष्ठ वर्ग में आभा भार्मा ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। वरिष्ठ वर्ग में आदर्श साहू ने प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा अभिवन पांडेय ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। ये विद्यार्थी पंडित रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय रायपुर में आयोजित राज्य स्तरीय प्रतियोगिता में रायगढ़ जिले का प्रतिनिधित्व करेंगे। इन सभी विद्यार्थियों का मार्गदर्शन शाला के विज्ञान के शिक्षक अजय शर्मा ने किया।

डी.ए.वी. छाल में हुई विज्ञान एवं चित्रकला प्रदर्शनी

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल एसईसीएल छाल में विज्ञान एवं चित्रकला प्रदर्शनी का आयोजन किया गया, जिसमें विद्यार्थियों ने बढ़चढ़ कर अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया। मुख्य अतिथि ने पेटिंग बनाकर प्रदर्शनी का शुभारंभ किया। प्राचार्य के.डी. भार्मा ने सभी प्रतिभागी विद्यार्थियों का उत्साहवर्धन किया। प्रदर्शनी में आदर्श साहू द्वारा बनाए गए राडार एवं रोबोट ने खूब वाहवाही बटोरी। *संवाददाता : प्राचार्य डी.ए.वी. छाल (रायगढ़)*

भावभीनी श्रद्धाञ्जलि

बड़ेडोंगर (कोण्डागांव) । बस्तर संभाग में स्थित कोण्डागांव जिले के बड़ेडोंगर (बेड़ागांव) में संचालित आयुर्वेद चिकित्सा गुरुकुलम् के संचालक डॉ. प्रवीण भण्डारी जी की माताजी श्रीमती देवकी भण्डारी का स्वर्गवास दिनांक २६-११-१९ को हो गया, जिनका अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से दिनांक २८-११-१९ को सभा प्रधान आचार्य अंशुदेव देव आर्य जी के द्वारा सम्पन्न हुआ। इस दुखद अवसर पर आचार्य बलदेव राही (कार्यालय मंत्री एवं मुख्य अधिष्ठाता सभा), पं. ऋषिराज आर्य, संजय शास्त्री, राजबहादुर शास्त्री एवं अनिल आर्य सहित गांव के गणमान्य नागरिक उपस्थित रहे। गुरुकुल संचालन में माता जी का विशेष योगदान रहा है। छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा एवं अग्निदूत परिवार माताजी के आत्मा की शांति के लिए भावभीनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है।

दयानन्द मठ, दीनानगर के संस्थापक, वीर सन्यासी लौह पुरुष फील्ड मार्शल

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का १४३वाँ जन्मोत्सव

आदरणीय आर्य बन्धुओं,

परमपिता परमात्मा से आपकी दीघार्यु एवं उत्तम स्वास्थ्य की मंगल कामना करते हैं। आपको बताते हुए हर्ष हो रही है, कि लौह पुरुष फील्ड मार्शल, **पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज का १४३वाँ जन्मोत्सव दयानन्द मठ, दीनानगर** में बड़े ही हर्षोल्लास एवं उत्साह सहित **दिनांक १० जनवरी २०२० दिन शुक्रवार** को मनाया जा रहा है। जिसमें आप आर्य महानुभावों की सहभागिता हम सहृदय चाहते हैं। समारोह में आपके से शोभा बढ़ेगी, जिसके मठ परिवार आपका सदैव आभारी रहेगा।

: कार्यक्रम :

दिनांक ३-१-२०२० से १०-१-२०२० तक प्रात: ५ बजे निरन्तर दीनानगर में प्रभात फेरी एवं प्रात: ६.३० बजे से स्वामी जी के जीवन पर कथा एवं वृहद यज्ञ जिसकी पूर्णाहुति १० जनवरी सुबह ९.०० बजे होगी। १० बजे से विद्यालयों एवं महाविद्यालयों से आये हुए बच्चों द्वारा कार्यक्रम प्रस्तुत किया जायेगा, तत्पश्चात् १.०० बजे ऋषि लंगर।

- भवदीय : स्वामी सदानन्द सरस्वती अध्यक्ष, दयानन्द मठ, दीनानगर।

अग्निदूत के ग्राहक सदस्यों की सेवा में

छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के मासिक मुख पत्र **'अग्निदूत'** के समस्त ग्राहक सदस्यों से निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क १००/- यथाशीघ्र सभा कार्यालय को भेज दें, जिससे कि उन्हें नियमित रूप से 'अग्निदूत' भेजा जाता रहे। जिन सदस्यों के शुल्क तीन वर्षों से अधिक बकाया हो, उनसे निवेदन है कि वे अपना दसवर्षीय शुल्क ८००/- रु. भेजें। इस कार्य को यथाशीघ्र प्राथमिकता से करें। **अन्यथा इस मास से अग्निदूत भेजना बंद कर दिया जायेगा।** पत्र व्यवहार में अपना सदस्य संख्या तथा पूरा पता पिन कोड सहित अवश्य लिखें। **छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा का भारतीय स्टेट बैंक दुर्ग शाखा में सेविंग एकाऊन्ट नं. : 32914130515, आई.एफ.एस.सी. SBIN0009075 कोड नं. अथवा देना बैंक दुर्ग शाखा में सेविंग एकाऊन्ट नं. 107810002857 आई.एफ.एस.सी. BKDN0821078 है, जिसमें आप किसी भी भारतीय स्टेट बैंक/देना बैंक की शाखा से आनलाईन शुल्क जमा कर सभा कार्यालय के दूरभाष नं. 0788-4030972 द्वारा सूचित करते हुए या अलग से पत्र लिखकर अवगत कर सकते हैं। अग्निदूत मासिक पत्रिका के सम्बन्ध में कोई भी शिकायत हो तो कृपया श्रीनारायण कौशिक को चलभाष नं. 9770368613 में सम्पर्क कर सकते हैं।**

- दीनानाथ वर्मा, मंत्री मो. 9826363578

कार्यालय पता : 'अग्निदूत', दयानन्द परिसर, आर्यनगर, दुर्ग (छ.ग.) 491001, फोन : 0788-4030972

बस्तर संभाग में स्थित जगदलपुर के कृषि विश्वविद्यालय में वेदप्रचार के दौरान डॉ. सिंह से सौजन्य मुलाकात एवं विश्व विख्यात कालीमिर्च के बगान में समितियों के मध्य वेदवार्ता करते सभा प्रधान आचार्य अंशुदेव आर्य एवं आर्यजन

CHH-HIN/2006/17407 दिसम्बर 2019 डाक पंजी. छ.ग./दुर्ग संभाग/99/2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लायसेंस नं. : TECH/170/CORR/CH-4/2017-18-19

सम्पादक प्रकाशक मुद्रक आचार्य अंशुदेव आर्य द्वारा छत्तीसगढ़ प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग के वैदिक मुद्रणालय से छपवाकर प्रकाशित किया गया।
प्रेषक : "अग्निदूत", हिन्दी मासिक पत्रिका, कार्यालय-छ.ग. प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द परिसर, आर्य नगर, दुर्ग (छ.ग.) ४९१००१